मध्य-प्रदेश में शिकार



रायबहादुर प्रभातचन्द्र बोस, सी० आई० ई०
(एडवोकेट नागपुर हाईकोर्ट)

मध्य-प्रदेश में शिकार

[Big Game Shooting in C. P.]

लेखक—

रायबहादुर प्रभातचन्द्र बोस, सी० आई० ई०,

एडवोकेट (नागपुर हाईकोर्ट)

प्रथम संस्करण, १००० | सन् १९३६ | मूल्य, एक रुपया

प्रेमा-पुस्तकमाला का प्रथम पुष्प—

प्रकाशक—

प्रेमा-पुस्तकमाला,
इण्डियन प्रेस लिमिटेड, जबलपुर।



मुद्रक—

बालगोविन्द गुप्त,
शुभचिन्तक प्रेस, जबलपुर।

भूमिका

हिन्दी भाषा में शिकार की कोई किताब नहीं है, ऐसा कहने में कोई अत्युक्ति न होगी, क्योंकि जो कुछ एक-दो हैं भी, वे सिर्फ एकाध विषय पर ही हैं। फिर, वे मामूली हैसियतवाले शिकारियों के काम की नहीं, बल्कि बहुत पैसेवाले, ऊँचे दर्ज़े के लोगों के वास्ते हैं, जो एक-एक बार में दो-चार हज़ार रुपये ख़र्च कर सकते हैं, जिनके इन्तज़ाम में २०-३० हाथी काम में लाये जाते हैं और जो हाथियों से ही हाँका कराके हाथी पर से ही शिकार खेलते हैं। यह किताब ऐसे लोगों के लिए नहीं है, बरन् उनके लिए है जो पैदल चलकर, बहुत थोड़ीसी रकम ख़र्चकर अपनी मिहनत और मशक़्क़त से शिकार खेलने का शौक रखते हैं और दरहकीकत में ये ही असली शिकारी हैं। अगर इन शिकारियों को हमारे ३० वर्ष के तजुर्बे से कुछ फ़ायदा हुआ तो हम समझेंगे कि इस किताब के लिखने में हमको जो मिहनत पड़ी वह सफल हो गयी और इसी सबब से यह किताब लिखी गयी।

इस किताब के लिखने में मुझे श्री० पं० ब्रह्मदत्तजी तिवारी से मदद मिली है, जिन्होंने प्रूफ़ भी सुधारे हैं। फ़ोटो श्री० राज राजेश्वरीप्रसाद वर्मा ने खींचे हैं और ब्लाक इण्डियन प्रेस ने बनाये हैं। इन सबके हम आभारी हैं।

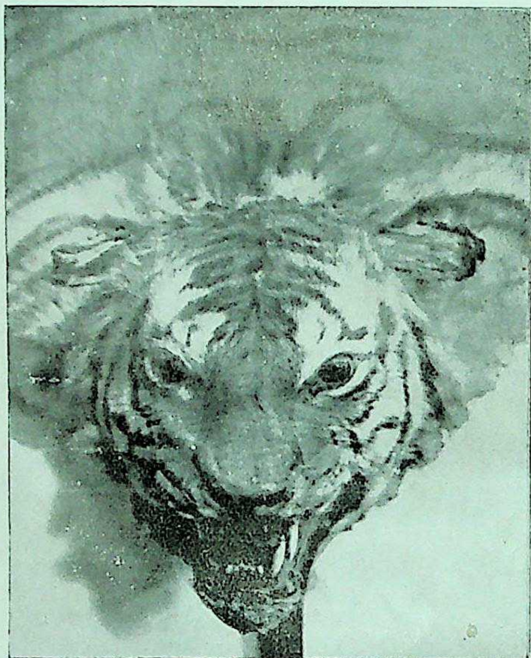
जबलपुर,
ता: २-८-३६.

प्रभातचन्द्र बोस।

विषय-सूची

चित्र-सूची





ਪ੍ਰਠ ੧

मध्यप्रदेश में शिकार

बाघ

इसको हिन्दी में बाघ, नाहर व शेर और गोंड़ी में पूली कहते हैं। यह करीब करीब हिन्दुस्थान के सब जंगलों में मिलता है और जितने कटीले जानवर हैं उनमें देखने में सबसे खूबसूरत होता है। इसका रंग मटीला पीला, कुछ गेरूसा, ललामी लिए होता है और उसपर काले रंग के पट्टे होते हैं; पेट का रंग सफेद होता है और उसपर भी काले पट्टे होते हैं। शेर की सूरत साम्हने से बहुत डरावनी होती है और यह जानवर बहुत ताक़तवर होता है जिससे बड़े से बड़े जानवर को भी मारकर खा जाता है।

शेर सब जंगलों में रहता है, मगर शिकारियों को बहुत मुश्किल व इन्तज़ाम और पैसा खर्च करने पर मिलता है। शिकारी की तबियत जंगल के सब जानवरों का शिकार करके खूब क्यों न भर जाय लेकिन शेर के शिकार से कभी नहीं भरती। इसका सबब यों है कि पहिले तो यह सब जानवरों से ख़ूबसूरत होता है, दूसरे सब जानवरों का राजा माना जाता है और तीसरे यह बहुत ताक़तवर भी होता है।

आदमी इसके साम्हने विना हथियार के कुछ कर ही नहीं सकता और इसके मुकाविले वैसा ही रहता है, जैसे कि बिल्ली के मुकाविले में चूहा।

हिन्दुस्थानी शिकारी शेर दो किस्म के वताते हैं, एक लोधिया और दूसरा ऊँटिया। दोनों का रंग मैला पीला, सुर्खी लिये हुए होता है। लोधिया वाघ के पट्टे करीव करीव और ज़्यादा काले होते हैं व ऊँटिया वाघ में पट्टे वहुत कम और दूर दूर होते हैं जिससे उसका रंग ऊँट के माफ़िक मालूम होता है। लोधिया वाघ छोटा और वहुत फुर्तीला होता है मगर ऊँटिया भारी, वड़ा और कम फुर्तीला होता है।

मेरी समझ में दोनों एक ही जाति के हैं। जव शेर नौजवान रहता है तव उसमें ज़्यादा फुर्ती रहती है, पट्टे भी नज़दीक-नज़दीक होते हैं और वह सिर्फ़ जंगली जानवरों का ही शिकार किया करता है। लिहाज़ा वह मिहनत पर चढ़ा हुआ होता है और लोधिया कहलाता है। जव वह वहुत पुराना हो जाता है और उसे जंगली जानवर मुश्किल से मारने को मिलते हैं, तव वह अकसर गाँवों के पास नालों में, या नदियों के किनारों की जामुन और करोंदा की घनी झाड़ियों में, जहाँ पानी करीव मिलता है, घनी छाया रहती है और ठंडक भी होती है, वहाँ वसता है। जहाँ चरागाह होते हैं और कई गाँवों के ढोर चरने को भेजे जाते हैं वहाँ अपना मौका देखकर वैल, गाय, भैंस वगैरह मार लेता है और उसे ज़्यादा मिहनत

व मशक्कत नहीं उठानी पड़ती। ऐसी जगह उसे बहुत खाने को मिल जाता है; इससे वह बहुत भारी और मोटा हो जाता है। ज़्यादा पुराना होने से उसकी बहुतसी काली लकीरें उचट भी जाती हैं और दूर से वह ऊँट के रंग का दिखलायी पड़ता है और इससे ऊँटिया कहलाता है।

ऐसे शेरों मेंसे जब कोई बहुत ही ज़्यादा पुराना हो जाता है, दाँत वग़ैरह भी कुछ गिर जाते हैं, या किसी शिकारी की गोली से जख़्मी होकर वह कमज़ोर हो जाता है तो वह आदमखोर भी हो जाता है। इस बयान का यह मतलब नहीं कि आदमखोर शेर बुड्ढा और जख़्मी ही होता है, मगर ज़्यादातर ऐसा ही होता है। कभी कभी इत्तिफ़ाक से शेर को आदमी मिल जाता है और उसे मारकर जब वह नमकीन गोश्त का मजा पा लेता है तब वह आदमखोर हो जाता है। शेर बहुत चालाक जानवर है और जब वह आदमखोर हो जाता है तब तो उसकी चालाकी की हद ही नहीं रहती।

शेरनी १४ या १५ हफ्ते में बच्चे जनती है। बच्चे अकसर दिसम्बर से लगाकर जून तक पैदा होते हैं। शेरनी पाँच बच्चे तक जनती है मगर दो से ज़्यादा एक मर्तबे में मुश्किल से पलते हैं और जब तक वे पूरे जवान नहीं हो जाते तब तक अपनी मा के पास रहते हैं। बच्चे दो साल में पूरे बढ़ जाते हैं। शेरनी हर तीन साल में एक बार ब्याती है। जब वह गाभिन हो जाती है तब शेर को छोड़ देती है और

बहुत घने जंगल में बहुत ही औघट जगह में चली जाती है और वहाँ बच्चा जनती है। जब बच्चे बड़े हो जाते हैं तब फिर वह शेर से मिलती है। ऐसा कहते हैं कि शेर नर बच्चों को मार डालता है इसलिए शेरनी उससे अलहदा हो जाती है।

शेर की लम्बाई नकुए से सिर व पीठ की रीढ़ पर से दुम की नोक तक ली जाती है और अकसर साढ़े नौ फुट होती है। यों तो १२ फुट तक के शेर मारे गये हैं, लेकिन इतने भारी शेर आजकल नहीं मिलते। दस फुट या इससे ज़्यादा का बहुत बड़ा समझना चाहिए। शेर का नाप चमड़ा छीलने के पेश्तर ही लेना चाहिए। चमड़ा छीलने के बाद फिर नाप ठीक नहीं होता, क्योंकि चमड़ा खींचने से बढ़ता है और तब नाप भी बढ़ जाता है।

शेर के शिकार का सबसे अच्छा वक्त अप्रैल और मई है जबकि धूप खूब तपती है और दिन को लू चलती है। इन दिनों जंगल में पत्ती झड़ जाती है; बाघ को जंगली शिकार बहुत कम मिलता है और वह गाँवों के पास के नाले व नदियों के किनारे की झाड़ियों में आ बसता है। शेर का शिकार अकसर हाथी पर से होती है, या मचान बाँधकर, या कभी कभी पैदल ही। यह आख़री किस्म बहुत ही खौफ़नाक और जान-जोखिम है और इस तरह से शिकार करने में कई शिकारियों ने जान खो दी है।

अगर उसके साथ कोई छेड़-छाड़ न की जाय तो अकेला शेर एक बैल हर पाँचवें दिन मारेगा। अगर वह बहुत



ਤੁਠ ੫

भूखा होगा तो दोनों पिछली रानें पहिली ही रात को खा जावेगा। वह गारे से ज़्यादा दूर न जावेगा और रात को फिर वहाँ आकर सिर छोड़कर बाकी सब खा लेगा। तीसरी रात को हड्डियाँ साफ कर लेगा और फिर दो दिन तक शिकार की तलाश न करेगा। मगर कोई शिकार पास आ जाय तो उसे मार लेगा। लेकिन यदि शेर पर, जब वह गारे पर वापिस आया हो, बन्दूक चलायी गयी हो तो वह जानवर मारने के बाद गारे पर वापिस नहीं आवेगा और उसे जो कुछ खाना होगा पहिली रात को ही खा लेगा और मौका मिलने पर नया गारा करेगा। पर शेरनी और उसके बच्चे पूरा बैल पहिली रात को ही साफ कर देंगे। शेर थप्पड़ से जानवरों को बहुत कम मारता है। वह दाँतों से गर्दन पकड़ता है और बदन को साम्हने के दोनों पंजों से दबाकर झटके से गला तोड़ देता है।

जनवरी सन् १९२२ का ज़िक्र है कि मैं अपने दो साथियों के साथ डोभी के डाक-बँगले में ठहरा था जो जबलपुर से मंडला सड़क पर १४ मील दूर है। मेरे साथियों ने कहा कि मालगुज़ारी जंगल को हाँक लेवें, साम्हर वगैरह मिलने की उम्मीद है। मैंने कहा "बहुत अच्छा।" पास ही, करीब एक मील दूर उदैपुरा नाम का गाँव है। हम लोग वहाँ को रवाना हुए और वहाँ से तीस हँकैये इकट्ठेकर हाँका करना शुरू किया। हाँकते हाँकते करीब ४ बज गये और कुछ भी नहीं निकला, बल्कि हम लोग सरकारी बंजर के पास

पहुँच गये। बंजर के पास एक घने पहाड़ में गिद्ध गिरते हुए दिखे। उसको हाँका तो कुछ नहीं निकला। भीतर जाकर देखा तो एक मरा हुआ साम्हर पाया, जिसका पिछला हिस्सा शेर ने खा लिया था। उसके सींग ३७½ इंच लम्बे थे। यह देखकर हम लोग वापिस हुए और लौटते समय एक जंगल और हाँका। इत्तिफ़ाक से एक बहुत बड़ा साम्हर जोरों से भागता हुआ निकला। मैंने बंद को जोड़कर गोली दागी। थोड़ी दूर तक तो वह भागा पर फिर गिर पड़ा। उसके सींग ३६ इंच लम्बे और बहुत मोटे थे। रंग सुरंग था। करीब २०-२५ आदमी उसे उठाकर लाये। अब हम लोगों की सलाह हुई कि सरकारी बंजर का परमिट लेना चाहिए। हमने दरख़्वास्त उसी दिन दी मगर एक दूसरे साहब का परमिट फरवरी का था। मुझे बमुश्किल पहिली मार्च से पन्द्रह मार्च तक का परमिट मिला। ऊपर साम्हर के बारे में जो वाक़्या लिखा उसकी गर्ज़ सिर्फ यही थी कि डोभी में शेर था और मुझे उसका पता कैसे लगा।

मैंने २८ फ़रवरी की शाम को अपने शिकारी इब्राहीम के साथ तीन पड़े, तम्बू, कुर्सी व खाने-पीने वगैरह का सामान उदैपुरा पहुँचा दिया और जतला दिया कि पड़े रात ही को बाँध दिये जावें। इब्राहीम ने रात ही को पड़े बँधवाये और सवेरे जब पड़े खोलने गया तब देखा कि गारा हो गया है। रात ही को एक पड़ा शेर ने मार लिया था और इब्राहीम ने

एक आदमी फ़ौरन बरेला को हमारे दूसरे साथी गुलामनबी को खबर देने को भेजा। इस आदमी ने गुलामनबी को बहुत देर में खबर दी। गुलामनबी ने ताँगे में बैठकर मुझे ३ बजे दिन को कचहरी में खबर दी। मैं कचहरी से फ़ौरन घर आया और तैयार होकर मोटर में रवाना हुआ। ४½ बजे शाम को नागा पहाड़ की घाटी के नीचे पहुँचा। घाटी चढ़ने में एक टायर बर्स्ट हो गया जिससे आधा घंटा लग गया। फिर हम लोग आगे बढ़े, लेकिन २ फर्लांग ही चले थे कि दूसरा टायर बर्स्ट हो गया। बड़ी मुश्किल से ६ बजे शाम को उदैपुरा पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर मालूम हुआ कि आदमी बैठे-बैठे चले गये और गाँव के शिकारी डुमरा ने शैतानी करके कोई इंतज़ाम नहीं किया। हम लोग फ़ौरन गारा देखने गये और उसे ढूँढ़कर निकाला। शाम होती जाती थी पर चाँदनी रात थी जिससे हम लोग एक पास के पेड़ पर मचान बाँधकर बैठ गये, मगर शेर नहीं आया। करीब ११ बजे रात को उतरकर चले आये। दूसरे दिन सुबह फिर पहुँचे और इन्तज़ाम कर हाँका कराया, मगर शेर नहीं निकला जिससे बहुत अफ़सोस हुआ। इब्राहीम को बहुत ताकीद कर दी और डुमरा को निकाल दिया। दूसरे पड़े बाँधने का इन्तज़ाम करके मैं जबलपुर चला आया।

शेर लहटा हुआ तो था ही; फिर छठवीं तारीख की रात को गारा किया। मैं ७ मार्च को कचहरी पहुँचा ही था कि गुलामनबी ने आकर मुझे गारा होने की खबर दी। मैं

फ़ौरन घर वापिस आया और दरेस बदलकर रवाना हुआ। मोटर को १६ वें मील पर छोड़कर ५ मील पैदल गया और मौके पर जा पहुँचा। वहाँ पर इब्राहीम, महगवाँ के शिकारी जयसिंह और ६० हाँकेवाले हाज़िर थे। धूप कुछ कड़ी थी। इब्राहीम ने कहा, थोड़ा आराम कर लो। मैंने कहा कि मचान पर बैठकर ही दम लूँगा। बस, मैं और गुलामनबी एक मचान पर, जो बीच नदी में एक कोहे के पेड़ पर बनाया गया था, चढ़ गये और थोड़ी देर में हाँका शुरू हो गया।

जब हाँका करीब ख़तम होने को आया और आदमियों की आवाज़ पास सुनायी देने लगी, तब मैंने राइफ़ल रखकर बारह नम्बर की बन्दूक हाथ में ले ली। इतने ही में गुलामनबी ने मुझे इशारा किया। मैंने देखा तो एक बड़ा शेर सीधा मेरे मचान की तरफ आ रहा था, मगर चूँकि मैंने मचान पर छोटी छोटी डालियाँ आड़ के लिए लगा ली थीं उन्हींकी आड़ आ जानेसे शेर पूरा नहीं दिखता था। शेर छलाँगें भरता हुआ सीधा मचान की तरफ बढ़ा। मुझे सिर्फ उसकी दुम दिखती थी। मैंने फ़ौरन ख़्याल किया कि वह मचान के नीचे से निकलेगा, और उसी ख़्याल के साथ ही साथ मैंने बन्दूक को मचान में घुसेड़ दिया। बन्दूक का घुसेड़ना ही था कि शेर का सिर मचान के नीचे दिखा। अब मुझे बन्दूक को कंधे में लगाने की मुहलत न मिली, मैंने सीने पर जोड़कर फ़ौरन फ़ैर किया। निशाना बहुत ठीक लगा; शेर एक भी कदम न

चल सका और वहीं लुढ़क गया। मेरा मचान सिर्फ आठ फुट ऊँचा था और पेड़ बहुत मोटा था इसलिए मैं अपने पीछे कुछ भी नहीं देख सकता था। गुलामनबी मुझसे ऊँची डाली पर बैठा था। वह बोल उठा "शाबास, मार लिया!" गुलामनबी का इतना बोलना था कि शेर ने आँखें खोल दीं और ऊपर को देखा तो उसकी नज़र सीधी मुझ पर पड़ी। बस, देखते ही उसका रोम-रोम खड़ा हो गया। वह फूल उठा और बड़े जोर से आवाज़ करके खड़ा हो गया। मैंने फिर दूसरी गोली दागी जो उसके कलेजे पर लगी और वह गिर पड़ा, मगर मरा नहीं और खड़ा न हो सकने से घसिटकर पेड़ के पीछे करीब आठ फुट चला गया। उसने ज़ोर से हाऊँ-हाऊँ की तीन-चार आवाज़ें दीं और गुर्राने लगा। गुलामनबी ने कहा कि वह तो पेड़ पर चढ़ा आता है। मैंने कहा कि "मत घबड़ाओ।" मैं मचान पर खड़ा हो गया और पीछे की तरफ घूमकर गर्दन पर बन्दूक जोड़कर फैर किया। शेर वहीं गिर पड़ा, लेकिन गिरते-गिरते तक उसने एक बड़ा पत्थर दाँत से चबा डाला था, यहाँ तक कि उसका एक दाँत भी टूट गया।

फिर हम लोग उतरे और हाँकेवालों को देखते हैं तो एक-एक झाड़ पर सात-सात आदमी चढ़े थे। जो सबसे ऊपर चढ़ा था उसकी डाली झुककर नीचे आ गयी थी। खैर, आदमियों को तसल्ली दी और वे उतरे। जब शेर को देखा तो मादा निकली मगर ९½ फुट लम्बी। वह बहुत मस्त

थी। फिर उसको बाँधकर मोटर तक लाये और अपने बँगले पर लाकर उसे चीरा तो उसके पेट में पाँच बच्चे निकले। उसके पिछले पैर में एक गोली भी मिली जिससे पता चला यह बहुत पुरानी बाघन थी और इस पर पहले गोली भी चल चुकी थी, जिससे वह बहुत चालाक हो गयी थी। वह एक कर्नल साहब के बारह पड़े खा चुकी थी और जब हाँकी जाती थी तब या तो पीछे को कट जाती थी और अगर साम्हने को निकलती थी, तो दौड़ती हुई इसी मचान के नीचे से निकल जाती थी; मगर मार नहीं खाती थी। एक दफ़ा यही कर्नल साहब अपनी मेम को लेकर इसी पेड़ पर (करीब बीस फुट ऊँचा मचान बाँधकर) बैठे और हाँका करवाया। इनका शिकारी पास ही के पेड़ पर बैठा। हाँका होने पर जब शेरनी बाहर निकली तब शिकारी ने इशारा किया कि गोली मारो। शेरनी ने साहब की तरफ़ देखकर ज़ोर से आवाज़ दी। साहब ने बन्दूक नीची कर ली और शेरनी को जाने दिया।

करीब करीब सब जानवरों के हाँकने के वक्त हवा के रुख का ख्याल रखना जरूरी होता है। अगर हवा जानवर की तरफ से हाँकेवालों की तरफ बहती हो तो पक्का है कि ७० फ़ी सदी वह जानवर शिकारी के सामने से नहीं निकलेगा बल्कि किसी भी तरफ से कट जावेगा। शेर के बारे में यह बात ज़रूरी है कि हवा का रुख अगर शिकारी की तरफ से शेर की तरफ है तो शेर फौरन हाँकेवालों की तरफ रवाना

होगा और कटकर निकल जावेगा। अगर ऐसा न होकर हवा हाँकेवालों की तरफ से शेर की तरफ वहती हो तो शेर ७० फ़ी सदी मचान की तरफ से निकलेगा, पर हाँका ठीक तौर से किया जाना चाहिए। शेर को हवा के ज़रिये से पहले ही आदमियों की बू मिल जाती है, और अगर शिकारी की तरफ से बू मिली तव फिर हाँकेवाले कितना ही शोर क्यों न मचावें, शेर नहीं लौटेगा।

सन् १६२२ के वड़े दिन की छुट्टियों का वाक़्या है कि मैं वघराजी व पोंड़ी ब्लाक का परमिट लेकर वहाँ अपने पाँच दोस्तों के साथ शिकार खेलने को गया। पहले दिन ज्योंही पड़ा बाँधा गया, त्योंही गारा हो गया। फिर हाँका किया गया, मगर हवा का रुख उल्टा था, याने हवा मेरी तरफ से शेर की तरफ वहती थी। हाँका वहुत ही अच्छी तरह किया गया, पर शेर नहीं निकला। दूसरे दिन सुवह देखा तो गारे को शेर ने फिर खाया था। फिर हँकवाया; हवा का रुख उल्टा था, शेर फिर कट गया। ऐसा तीन दिन तक हाँका किया मगर हवा ने हर दिन बिगाड़ दिया और शेर हाथ न लगा। मेरे कहने का मतलब यह है कि अगर सब बातें सम्हाली जावें मगर हवा का रुख शिकारी की तरफ से शेर की तरफ हो तो शेर या गुलवाघ हर्गिज़ नहीं मिलेगा।

एक दूसरे वक्त का, याने सन् १६२३ का ज़िक्र है कि मैं इसी बघराजी ब्लाक में शिकार को गया। पहिले दिन ही

गारा हो गया मगर हाँकनेवाले बहुत थोड़े मिले, तिसपर भी हम लोग मचान पर जा बैठे। हवा का रुख शेर की तरफ से मेरी तरफ़ था; हाँका शुरू हुआ और थोड़ी ही देर में एक बड़ा शेर मेरी तरफ आता हुआ दिखा। वह पूरा नहीं दिखता था; झाड़ियों मेंसे सिर्फ झलकता था। एक नाट मेरे दाहिने तरफ़ थी, उसी पर मैं बन्दूक जोड़कर रह गया। एक सेकण्ड के भीतर ही शेर उसी नाट में पहुँचा। मैं उसका बन्द जोड़कर लबलबी दबाने को ही था कि शेर ने अपना सिर मेरी तरफ मोड़ा (यहाँ पर शेर मुझे बैंड़ा मिला था) और उसने सिर इतना मोड़ा कि जिस जगह मैंने जोड़ा था, वह ढँक गयी। मैंने फ़ौरन शिस्त उठाकर नकुए पर जोड़ा और फैर किया। शेर ने बड़े ज़ोर से एक झोका लिया और एक बुलन्द आवाज़ दी और लौटकर चला गया।

मेरे जो साथी मेरे साथ शिकार खेलने गये थे वे मेरे दाहिने और बायें दोनों तरफ दूसरे पेड़ों पर बैठे थे और उन्होंने कभी शेर का शिकार नहीं खेला था। जो दोस्त मेरे बायें बाज़ू पर थे उन्होंने जोर से पुकारकर पूछा कि "क्या हुआ?" मैंने कोई जवाब नहीं दिया। करीब पाँच मिनट में मेरे दाहिने बाज़ू बैठे हुए साथी अपने पेड़ से उतरकर मेरे मचान के नीचे आये और कहने लगे "उतर आवो, शेर मेरी तरफ से चला गया।" मैंने उतरकर उनसे पूँछा कि आपने फैर क्यों नहीं किया?" तब वे बोले कि शेर मेरे दाहिने बाज़ू

से गया और मैं ऐसी जगह पर था कि फैर नहीं कर सकता था। ये बात बिलकुल सही है, क्योंकि वे एक डाल पर खड़े थे। फिर मैंने जहाँ फैर किया था, वहाँ गोली का निशान ढूंढ़ा मगर नहीं मिला। थोड़ी दूर तक तलाश किया, फिर भी कोई निशान नहीं मिला। तब सब लोग इकट्ठे हुए और बहुत अफ़सोस के साथ वापिस हुए।

हाँकेवालों के साथ मालगुज़ार का ठाकुर नाम का हवल्दार था। उसने कहा कि "मैंने किसी बड़े जानवर, याने साम्हर की नाले में कूदने की खड़बड़ाहट सुनी थी।" मुझे रात भर नींद नहीं आयी और रात भर पानी भी ज़ोर से बरसा। सवेरा होते ही मैंने चार मजबूत आदमियों को ठाकुर के साथ दूर तक ख़ून का पता लगाने को भेजा। ये लोग दो घंटे में वापिस आये और साथ में एक पत्थर भी लाये जिसमें ताज़ा खून लगा था।

फिर हम लोग बन्दूक लेकर उसी नाले में घुसे और लगातार डेढ़ मील तक खून पाया। नीची जगह का खून तो पानी बरसने से वह गया था मगर ऊँचे पत्थरों पर गिरा हुआ खून तब भी मौजूद था। इससे यह साबित हुआ, कि गोली शेर को अच्छी तरह लगी थी। शेर को कितना ही ढूँढ़ा लेकिन वह नहीं मिला। करीब १२ दिन बाद इसके मरकर सड़जाने की ख़बर मिली।

इस वाक्ये को लिखने की यह गर्ज़ थी, कि अगर मेरे बायें बाजूवाले शिकारी न बोले होते तो शेर के साथ उसका जो जोड़ा था, वह ज़रूर मेरे साम्हने से निकलता और मुझे या मेरे दोस्त को मारने का मौका मिल जाता। अगर दूसरे दोस्त उतरकर न आये होते तो मैं उस शेर के निशान ज़्यादा दूर तक देखता और शायद खून मिल जाता। मुमकिन था कि शेर मार पर भी आ जाता। इसलिए शिकारियों को चाहिए कि चाहे कुछ भी हो शेर, गुलबाघ या रीछ के हाँके में जब तक हाँका ख़तम न हो जावे कुछ भी न बोलें।

* * *

सन् १९२५ के मार्च महीने का ज़िक्र है कि डोभी ब्लाक का पर्मिट लेकर मैंने वहाँ अपना तम्बू व सामान वगैरह भेजा और साथ में चार पड़े भी भेजे। इब्राहीम को इन्तज़ाम के लिए भेजा। मेरी हाज़िरी नागपुर-कौंसिल की थी इसलिए १ मार्च से २० मार्च तक वहाँ रहा, पर ताकीद कर दी कि पड़े २० तारीख की रात को बाँधे जावें। इतने दिन पहिले से सामान व आदमी भेजने की गर्ज़ यह थी कि कोई दूसरा शख़्स चोरी से वहाँ शिकार न खेलने पावेगा। मैं तारीख २० को अपनी मोटर पर सवार होकर नागपुर से जबलपुर पहुँचा मगर उस दिन बहुत थक जाने के सबब डोभी नहीं गया। वहाँ गारा बाँधा गया और २१ तारीख की रात को दो गारे एक साथ हो गये। जब आदमी २२ तारीख को सबेरे पड़े खोलने गये

तब शेर की गुर्राहट सुनकर लौट आये और उन्होंने मुझे खबर दी। मैं २२ तारीख को करीब तीन बजे दिन को तम्बू पर पहुँचा और मौके पर करीब ४ बजे पहुँच गया। उसी कोहे के झाड़ पर उत्तर की तरफ मुँह करके बैठ गया, (जहाँ सन २२ में बैठा था) मगर बैठने के पेश्तर देखा कि दोनों पड़े मारकर शेर उनको उत्तर की तरफ़ की पहाड़ी में घसीट ले गया है। एक का तो आधा हिस्सा, याने पिछली दोनों रानें खा गया था और दूसरे को छुआ तक न था। इसी पड़े को शेर मार रहा था जब आदमी उनको खोलने गये थे और उसकी गुर्राहट सुनकर लौट आये। जब हमारा शिकारी आया तब तक यह पड़ा जिन्दा था मगर उठ नहीं सकता था।

जब मैं मचान पर बैठ गया तब हाँका शुरू हुआ। थोड़ी देर में गुलामनबी ने इशारा किया कि शेर मेरे बायें तरफ से निकल गया। मैंने लौटकर देखा कि एक नाली मेरे बायें को करीब १०० गज दूर थी और उसी मेंसे दबका हुआ निकलकर एक बहुत बड़ा शेर मेरे पीछे की पहाड़ी पर चढ़ता जाता था। जब मेरी नज़र उस पर पड़ी तब वह करीब २०० गज दूर था। मैंने बन्दूक तो जोड़ली मगर चूँकि शेर जंगल के भीतर था और साफ नहीं दिखता था, फैर नहीं किया। हाँका करीब था; हाँकेवालों को रोककर, जिस पहाड़ी में शेर घुसा था, उसी को घेरकर हाँकने को कहा। मैं उसी मचान पर अब दक्खन की तरफ मुँह फेरकर बैठ

गया। करीव पाँच बज गये थे कि गुलामनवी ने इशारा किया कि साम्हने कोई जानवर है। मैंने देखा तो कुछ सफ़ेद-सफ़ेद दिखायी दिया। मैंने वन्दूक उसी जगह जोड़ ली मगर सफेदी से बैल का धोखा हुआ और इसलिए वन्दूक नीची कर ली। जव जानवर आगे वढ़ा तव सफेदी में काली-काली धारिएँ भी दिखायी दीं और मेरा शक दूर हो गया। मैंने वन्दूक उठायी मगर अव मेरे और शेर के बीच में एक वड़ा पेड़ पड़ता था इसलिए उसे जोड़ नहीं सकता था। शेर भी करीव ८० गज़ की दूरी पर था। वह वहाँ ठहर गया और थोड़ी देर में लौटकर दूसरी वाजू जाने लगा। ज्योंही वह पेड़ की आड़ से अलग हुआ, त्योंही मैंने उस पर फ़ैर किया और वह भागा। यह पहाड़ी जिस पर वह था बाँसेन से भरी थी और उस पर पेड़ बड़े घने थे। जंगल के भीतर कुछ दिखायी नहीं देता था। क़रीब १०० गज़ के फासले पर वायें तरफ एक नाट-सी थी, वीच में कुछ नहीं दीख पड़ता था। फ़ैर करने के वाद मैंने वन्दूक को फौरन अपने दाहिने से घुमाकर वायें पर कर लिया और इस नाट पर जोड़ा। मैं यहाँ वन्दूक लाया ही था कि शेर ज़ोरों से छलाँगें भरता हुआ इसी नाट पर पहुँचा। मुझे निशाना लेने की मुहलत नहीं मिली। उसका पेटा भर दिखायी दिया; वाकी वदन डालियों में छिपा रहा। मैंने उसी सफेदी में अन्दाज़ से वन्दूक को जोड़कर फ़ैर किया। शेर वहीं गिर पड़ा और उसके चारों पैर आसमान की तरफ उठ गये और हिलने लगे। वह बहुत

बुरी आवाज़ देने लगा। मुझे यकीन था कि चूँकि मैंने सुपरमेगनम एक्सप्लोरा से फ़ैर किया है वह उठ नहीं सकेगा, मगर थोड़ी ही देर में उठकर वह भागा। मैंने बन्दूक को फिर से भरा नहीं था इसलिए जल्दी से उसे भरा, मगर मार न सका। शेर फिर उसी पहाड़ी में घुस गया जहाँ से पहिले हाँका था। मैं उतरा और जहाँ शेर गिरा था, वहाँ गया तो कम से कम एक बाल्टी खून देखा। वहाँ फेफड़े के टुकड़े भी पड़े थे। जहाँ से भागकर वह जंगल में घुसा था, वहाँ भी बहुतसा खून गिरा था। यह देखते देखते शाम हो गयी और हम लोगों ने यह सलाह की, कि दूसरे दिन सवेरे सात बजे फिर यहीं मिलेंगे और शेर को ज़रूर मरा पावेंगे।

ख़ैर, घर लौट आये। रात को नींद बिलकुल नहीं आयी, सिर्फ़ शेर मारने ही का सपना देखा किये और दिन निकलते ही मोटर पर सवार होकर घर से चल दिये। चाय भी नहीं पी। बरेला में कुछ नमकीन और मिठाई मोल ली और सात बजे के पहिले तम्बू पर पहुँच गये। कुछ आदमी इकट्ठेकर कोहे के पेड़ तक पहुँचे। वहाँ जाकर गारा देखा तो एक को तो वैसा ही पाया जैसा कि पहिले ही देखा था, मगर दूसरा मिला ही नहीं। बन्दूक के घोड़ों को दोनों पाये पर चढ़ाकर जंगल के भीतर घुसे तो क़रीब १०० गज़ तक घसीटन मिली और आख़ीर में सिर्फ़ चारों पैर मिले; कुल पड़ा शेर खा गया था।

हम लोग जंगल के बाहर निकले और तीनों शिकारी

सलाह करके इस नतीज़े पर पहुँचे कि जख़्मी शेर तो पड़े को खा ही नहीं सकता; इस पहाड़ी में उसका जोड़ा ज़रूर है और उसीने खाया है और यही सबब दो गारे होने का है। अब सवाल यही रह गया कि करना क्या चाहिए? कल का जख़्मी शेर तो ज़रूर ठण्डा हो गया होगा। इस पहाड़ी को हाँककर दूसरे को भी मार लिया जावे और पहिलावाला मिल जावेगा। हाँकेवालों को राज़ी किया और दूसरी तरफ से भेजा। हमने एक दूसरे कोहे पर, जो उस नाली के नज़दीक था, जहाँ से पहिले दिन शाम को शेर छिपकर निकला था, एक मचान बाँधा और बैठ गये। हाँका शुरू हुआ और एकदम से हाँकेवाले चिल्लाये, "खा डाला, खा डाला; शेर यहाँ है," और गाली देकर कहने लगे कि कोई शिकारी इधर आते ही नहीं। हम लोग उतरे और इब्राहीम उसी तरफ से, याने दक्षिण से, पहाड़ी में घुसा और हम उत्तर की तरफ से, जहाँ कि हाँकेवाले चिल्ला रहे थे। वहाँ जाकर देखा कि एक पेड़ पर, जिसमें बिलकुल पत्ते नहीं हैं, पाँच डालियों पर पाँच आदमी बन्दरों की तरह बैठे हैं। पूछा कि शेर कहाँ है, तब उन्होंने घास की तरफ बतलाया। यहाँ घास कमर बराबर ऊँचा था। मैंने बन्दूक के घोड़े दोनों पाये पर करके बाँसेन के भीतर घुसना शुरू किया। यहाँ बाँसेन बहुत घनी थी; ढूँकते-ढूँकते एक मील तक गया, लेकिन शेर का पता कहीं भी नहीं लगा। सिर्फ कहीं कहीं खून दिखता था। आगे देखा तो इब्राहीम दूसरी तरफ से

चला आ रहा था और दोनों मिल गये। इस वक़्त क़रीब एक बजा था; धूप बहुत तेज़ थी और हम लोग भी ढूँढ़ते-ढूँढ़ते थक गये थे। एक पेड़ के नीचे बैठ गये और पानी पिया। फिर सलाह हुई कि थोड़ा और देख लें, तब लौटें। आगे बढ़े तो खून बहुत ज़्यादा मिला और कई जगह पर मिला, मगर साफ़ मालूम होता था कि खून रात का बासा है, ताज़ा नहीं।

अब आगे बढ़े और एक मील तक और ढूँढ़ा, मगर शेर नहीं मिला। बहुत थक गये थे, इसलिए सलाह ठहरी कि वापिस चलो। मैंने कहा, "जंगल का पिछला हिस्सा तो देख चुके हैं; चलना है तो अगले हिस्से से चलो; शायद मिल जाय।" सब राज़ी हुए और चले। क़रीब एक मील और चले होंगे कि मैंने कहा, "दाहिनी तरफ घास का एक छोटा सा टुकड़ा और रह गया है, उसे भी देख लिया जाय।" हम लोग उस तरफ को मुड़े तो देखा कि शेर एक पेड़ के नीचे पड़ा है। वह हम लोगों के पीछे दाहिनी तरफ था। जहाँ हम लोग थे—यानेहम तीन शिकारी, हमारा ड्राइवर चुन्नीलाल और चार गोंड़—वहाँ जंगल इतना घना था कि बाँसेन के मारे हम लोग सीधे खड़े नहीं हो सकते थे। मैंने यह ख़्याल किया, कि फ़ैर करने में गोली कहीं आदमियों को न लग जाय। शेर क़रीब १०० क़दम पर था और साफ़ नहीं दिखता था, मगर उसने आवाज़ दी और मैंने शिकारियों से कहा कि शेर के और हमारे बीच में करीब ४० फुट की खुली जगह है, वहाँ दौड़ चलो, फिर

फ़ैर करेंगे।" ज्योंही शेर ने आवाज़ दी, त्योंही हम लोग उसकी तरफ़ दौड़े और बीच मैदान में जाकर तीनों एक लैन से बैठ गये। शेर पहिले तो हमारी तरफ़ को चला, मगर जब हम लोगों की यह हरकत देखी तब फ़ौरन लौटा। मैंने इब्राहीम से कहा कि फ़ैर करो। उसने फ़ैर किया और शेर को गोली लगी। वह हम लोगों की तरफ नहीं आया, पर आवाज़ देता हुआ झाड़ी में भागा। हम लोग और फ़ैर न कर सके, मगर शेर का पीछा किया और ताज़ा खून मिला जिससे यह पक्का हो गया कि आख़िरी फ़ैर भी लगा है। करीब एक मील तक और पीछा किया।

शेर को पहिले दिन शाम को जो गोली लगी थी उससे वह बहुत कमज़ोर हो गया था; उसकी हिम्मत बहुत पश्त हो गयी और वह सामना करने की ताकत नहीं रखता था। वह फिर एक बहुत घनी झाड़ी में घुस गया। तब हम लोगों ने फिर सलाह की और हाँकेवालों से कहा कि, "तुम लोग बहुतसे पत्थर झोली में भरकर पेड़ पर चढ़ जाओ और फेंको। हम लोग घूमकर जाते हैं; शेर भागेगा तो मारेंगे—उसकी हिम्मत नहीं है कि वह पीछे लौटे।" बड़ी मुश्किल से ये लोग राज़ी हुए क्योंकि उन्होंने देख लिया था, कि वह बहुत बड़ा था और उसके चारों पैर ठीक थे। हम लोग आधा मील का चक्कर लगाकर झाड़ी के साम्हने पहुँचे। हाँकेवालों ने पत्थर फेंके और शेर ज़ोर से आवाज़ करके बाहर निकला। हम लोग जहाँ थे, वहाँ दरख़्त न थे, पर झाड़ियाँ थीं और हम

लोग जमीन पर खड़े थे। शेर करीब बीस फुट दूर से इब्राहीम के पास से निकला और उसने फैर किया। शेर को गोली लगी। वह गिर पड़ा और फिर उसने आवाज़ दी। मैं दौड़कर इब्राहीम के पास गया और फिर दोनों शेर के पास गये। एक फैर और सिर पर किया और मैंने दुम पकड़कर उठायी तो देखा कि मादा है। ये शेरनी पूरे दस फुट लम्बी थी—इसका चमड़ा मेरे पास अभी मौजूद है। हमको बड़ी खुशी हुई और उसे लेकर वापिस चले, लेकिन प्यास की हालत ऐसी थी कि बयान नहीं कर सकते। हम लोगों के पास का पानी १२ बजे दिन से ख़तम हो गया था और दिन भर धूप व गर्मी में पहाड़ी चढ़ते-चढ़ते, झाड़ियों में घुसते-घुसते अधमरे से हो गये थे। तम्बू से करीब ६ मील की दूरी पर पहुँच गये थे, मगर अब धीरे धीरे वापिस हुए।

रास्ते में एक नाला मिला जिसका पानी गंदा था। गोंड़ों ने तो घुसकर पानी पिया, लेकिन हम लोगों का दिल वैसे गंदे पानी को पीने का न हुआ! करीब एक मील और चले कि दूसरा नाला मिला। इसका पानी कुछ अच्छा था, मगर फिर भी पीने के क़ाबिल न था। प्यास तो ख़ूब लगी थी और उसे सँभाल नहीं सकते थे, इसलिए हम लोगों ने भी पानी पी लिया। बिलकुल शाम को तम्बू पर पहुँचे तो देखा कि जो कुछ खाना-मिठाई वगैरह रख गये थे, वह कुछ भी वहाँ नहीं था। गाँव का एक कुत्ता तम्बू में घुस गया था, उसीने सब कुछ खा लिया था। मारे भूख और मिहनत के

वहुत तकलीफ़ उठायी। ख़ैर, घर को रवाना हुए और ७½ वजे आ गये। दूसरे दिन से बुखार आ गया और ८ दिन तक विस्तर से नहीं उठ सके। यह सवव उस नाले का गंदा पानी पीने का था।

इसलिए यह ख़्याल रखना चाहिए कि चाहे कितनी ही प्यास क्यों न लगी हो जंगल में गन्दे नालों का पानी हर्गिज़ न पिया जावे। अगर यह पानी न पिया होता तो इस शेरनी का जो जोड़ा था, वह ज़रूर ही मारने को मिल जाता, क्योंकि दूसरे दिन ही इव्राहीम ने खवर भेजी कि शेर रात भर चिल्लाया और गाँव के आसपास अपनी मादा को ढूंढ़ता फिरता था। यहाँ यह वात याद रहे, कि वह दिन २३ मार्च का था और यही वक्त है कि शेरनी गरम रहती है और ये जानवर जोड़ खाते हैं। आठ रोज़ तक वरावर यह शेर उसी जंगल में फिरता रहा और रात भर चिल्लाया करता था। हमने इव्राहीम को मना कर दिया था, कि गोली विलकुल मत चलाना; बुखार अच्छा होने पर हम शिकार करेंगे। मगर अफसोस है, कि बुखार अच्छा न हुआ और हम न जा सके और यह वड़ा भारी शेर हमारे हाथ से निकल गया, क्योंकि हमारा पर्मिट सिर्फ़ मार्च ही का था और अप्रैल का दूसरे साहव का था। हमने फिर मई का पर्मिट लिया और उसे मारा, जिसका वाक्या आगे वतलावेंगे।

* * *

मई के शुरू में फिर इन्तज़ाम कर मझगवाँ (यह गाँव जवलपुर-मँडला सड़क पर है) मय कुल सामान के गये।

उस गाँव के मुकद्दम ने, जो गोंड़ था, एक झोपड़ी गाँव के बाहर की तरफ बनवायी थी और उसमें करीब ३० फुट लम्बा और १२ फुट चौड़ा एक ही कोठा था। उसके तीन तरफ परछी थी और कुल मकान अधचिरे बाँसों का बना था। बीच बीच में खम्भे लगे थे और दीवाल मिट्टी की न थी; बाँस के टट्टे मिट्टी और गोबर से छाप दिये गये थे। चूँकि मकान नया था और उसमें उसी दिन लिपाई-पुताई हुई थी, उसे ले लिया और उसमें ठहर गये, क्योंकि गर्मी बहुत पड़ी थी और दिन को बहुत तेज़ लू चलती थी। इस गाँव में एक ही कुँआ था, मगर वह सूख गया था। वहाँ से १½ मील की दूरी पर एक नाला था; वह भी सूख गया था परन्तु बीच-बीच में कहीं कहीं डबरे भरे थे। वहाँ से सुबह-शाम दो-दो घड़े पानी मँगवाना पड़ता था। पानी बास करता था, इसलिए एक हर्रा डालकर उसे उबालते थे और फिर छानकर ठंडा होने रख देते थे। तब उसमें ३–४ चाँवल भर पोटेशियम परमेंगेनेट (Potassium Permanganate) डाल देते थे, ताकि कोई बीमारी पैदा न हो।

पहिले दिन ही पड़े बाँध दिये गये, मगर गारा नहीं हुआ। सवेरे पास ही के मालगुजारी जंगल (आबादी) में गये तो देखा कि एक बछिया शेर ने मार ली है। चाँदनी रात होने से रात को उस पेड़ पर, जिसके नीचे शेर ने बछिया मारी थी, मचान बाँधकर बैठ गये। करीब दो बजे रात तक बैठे रहे, मगर शेर नहीं आया; इसलिए उतरकर चले आये।

दूसरे दिन सुबह फिर, जहाँ पर गारा हुआ था, वहाँ तक गये और चारों तरफ जमीन पर खोज देखे मगर वहाँ पर कोई निशान नहीं मिला।

आगे एक फर्लांग जाने पर दो गारे मिले—एक गाय और एक बैल—जिनको शेर ने रात को मारा था। तब यह तजवीज की कि इन दोनों के बीच के पेड़ पर मचान बाँधकर रात को बैठें और ऐसा किया भी। करीब आधी रात तक बैठे रहे; शेर की तो कोई आहट नहीं आयी, मगर गाँववाले चिल्लाये कि जानवर घुसा है और बछिया पकड़ ली। हम लोग करीब दो फर्लांग पर थे। आवाज़ सुनकर पेड़ से उतरकर गाँव में आये। मालूम हुआ कि शेर एक बाड़ी तोड़कर बछिया को उठा ले गया। मुकद्दम ने बतलाया कि अभी दस मिनट ही हुए होंगे और शेर पास ही होगा। हम लोग जिस मकान में थे, उसीके बगल में यह बाड़ी थी। गाँववाले सब इकट्ठे हुए और उन्होंने कहा कि आप लोग पश्चिम की तरफ मुँह करके बैठ जावो; हम जंगल के इस छोटे से टुकड़े को घेरकर हाँके देते हैं, जहाँ कि शेर बछिया को घसीट ले गया है। हम लोग जाकर बैठ गये। उस समय एक बजा था, मगर चाँदनी अच्छी छिटकी थी। उन लोगों ने हाँका, मगर शेर दूसरी तरफ से निकल गया; हम लोगों की तरफ से नहीं आया। इसके बाद हम लोग डेरे पर वापिस आ गये। हम लोग इस तरह से करीब पन्द्रह दिन तक रहे; रोज़ गारा होता रहा, मगर हर वक्त नई जगह पर; शेर

पुराने गारे पर कभी नहीं आया और न उसने बाँधे गये पड़ों को ही छुआ। नाले में उसके पंजों से पता चला कि शेर बहुत बड़ा, पुराना और चालाक है। गर्ज़ यह है, कि १५ रोज़ वहाँ रहकर, पानी की तकलीफ़ सहकर, घर वापस आ गये, मगर शेर नहीं दिखा। फिर भी पड़ों को और सामान को इब्राहीम की देखरेख में वहीं छोड़ आये।

ज्योंही पहिला पानी बरसा—याने शुरू जून था—त्योंही इब्राहीम ने आदमी भेजा कि गारा दूसरी जगह हुआ है, जहाँ कि हाँकने की जगह है; आप आओ। पहिले जो गारे होते थे वे आबादी में होते थे, जहाँ शेर के रहने की जगह न थी और उससे लगा हुआ बंजर दूसरे ब्लाक में था, जिसका पर्मिट हमारे पास नहीं था। जब हम ४ बजे शाम को वहाँ पहुँचे तो पेड़ों पर मचान तैयार पाये। हाँकेवाले भी तैयार थे। हम लोग मचानों पर बैठ गये। हमारे साथ गुलामनबी भी था। एक मचान पर मैं और गुलामनबी और कुछ दूर के मचान पर इब्राहीम था।

जब हाँका शुरू हुआ तब हवा ज़ोर से चलती थी, मगर उसका रुख़ शेर की तरफ से हमारी तरफ था। हाँका शुरू होते ही एक पट्ठा साम्हर हमारे सामने आकर खड़ा हो गया। हमने गोली नहीं चलायी और उसे जाने दिया। करीब एक घण्टे तक पेड़ पर बैठे रहे और हाँका इतने पास आ गया कि हाँकेवाले दिखने लगे। इतने में एक बहुत बड़ा साम्हर

जो कि विलकुल काला हो गया था, मचान के नज़दीक आ गया। गुलामनवी ने कहा कि हाँकेवाले आ गये हैं, इसमें शेर नहीं है, साम्हर को मार लो।

जब शेर का हाँका होता है, तब मामूली तौर पर दूसरे जानवर पर गोली नहीं चलायी जाती। मगर चूँकि इस शेर से वहुत छड़के हुए थे और हमको विलकुल उम्मीद नहीं थी कि वह निकलेगा और साम्हर भी वहुत पुराना और वड़ा था, लिहाज़ा हमने उस पर गोली चलायी। वह वहीं गिर पड़ा। उसके गिरने के पाँच मिनट के भीतर ही गुलामनवी ने कहा कि सामने की झाड़ी में कोई जानवर मालूम पड़ता है। यह झाड़ी हमारे मचान से १५० क़दम की दूरी पर थी। साफ़ तो नहीं मालूम पड़ता था, मगर यह पता चलता था कि कोई जानवर जरूर है। यह झाड़ी इब्राहीम के मचान के वहुत पास थी। गुलामनवी ने मुझसे इसपर फैर करने को कहा। मैंने कहा कि यह सम्हरिया है, हम इस पर फैर नहीं करेंगे। हम ऐसा सोच ही रहे थे कि इब्राहीम ने फैर किया और वह जानवर वहीं गिर पड़ा। गुलामनवी ने कहा कि यह शेर है, मगर वह इतनी दूर और ऐसी घनी झाड़ी में था कि उसके पट्ठे नहीं दिखते थे, कुछ मटीला-सा रंग मालूम पड़ता था। वह जानवर फिर उठा और इब्राहीम का दूसरा फैर चला। उसने वड़े ज़ोर से आवाज की और उछलकर पीछे की तरफ चला गया। आधा घराटा तक इन्तज़ार किया। हवा वहुत ज़ोर से चल रही थी। हम लोग उतरकर इब्राहीम के मचान

के पास गये और उसे नीचे उतारा। उससे पूछा कि काहे पर फैर किये थे? उसने जवाब दिया कि "शेर पर फैर किये थे—पहिला वंद जोड़कर मारा था और दूसरा फैर खोपड़ी पर किया था।"

यह सलाह हुई कि थोड़ी दूर तक देखें। थोड़ी दूरी पर खून की धार लगी देखी। इससे पता चला कि गोली ज़ोर से लगी थी। हम लोग खून देखते हुए कोई आधा फर्लाङ्ग ही गये थे कि पेड़ पर वैठा एक हँकैया मिला। उससे पूँछताछ की। हम लोगों को देखकर वह उतरा। वह वोला कि, "शेर ने तो मुझे पकड़ ही लिया था; उसका फटा हुआ मुँह देखकर मैं पेड़ पर चढ़ गया। वह वहुत ज़ख़्मी है और इसी तरफ को गया है।" जहाँ पर शेर के पंजे लगे हुए थे और जहाँ से वह आदमी पेड़ पर चढ़ा था उसमें करीव १०-१२ फुट का अन्तर था। इससे मालूम हुआ कि शेर वहुत ज़ख़्मी है, नहीं तो इस आदमी को पकड़ लेता।

हम तीनों और आगे वढ़े और कोई आधा मील ही गये होंगे कि एक जगह वहुतसा ताज़ा खून पड़ा देखा। शेर ने वहाँ पर कै भी की थी। उसने रात का खाया हुआ करीव १० सेर गोश्त कै कर दिया था। यहाँ से आगे वढ़े, मगर खून नहीं मिला। करीव आधा मील तक और गये थे कि एक सूखा नाला मिला। गाँववालों ने कहा कि यहाँ से एक मील की दूरी पर पानी है। यह सलाह हुई कि शाम होनेको आधा

घंटा बाकी है, जंगल घना है और गर्मी के दिन हैं, इससे रात मत करो। कल सुबह पानी पर जाकर देखेंगे तो मरा मिलेगा।

वहाँ से लौट पड़े और बायें तरफ से जंगल में से घुसते हुए आये। यह गाँव दीवान बहादुर जीवनदासजी का था। उन्होंने एक बड़ा भारी बिजार बैल बाहर से मँगवाकर इसी गाँव में छोड़ दिया था। यह बैल बहुत ही बड़ा था, और शायद हिसार की तरफ से मँगाया गया था। जिस टुकड़े की तरफ से हम लौटे उसीमें यह बैल मिल गया। देखा तो उसके पुट्ठों पर पंजों के बड़े बड़े निशान थे जिनसे खून बह रहा था और उसके कंधे को शेर ने आधा चबा डाला था। बहुत करके वह इसी बैल को पकड़ रहा था, जब हाँका शुरू हुआ और वह इसे छोड़कर भागा। इस बैल ने जब हम लोगों को देखा तब उसने बिलकुल जंगली के बतौर आदमी पर हमला किया। हम लोगों को जान बचाकर भागना पड़ा। हमने उसे वहाँ से हटाने की कोशिश की, लेकिन वह सबको मारता रहा इसलिए उसे वहीं छोड़कर चले आये। हम लोग जंगल मेंसे निकलकर आये और जंगल की किनार पर उस गाय को पाया जिसको शेर ने रात को मारा था और तीन-चौथाई खा लिया था।

उस दिन हम घर चले आये और दूसरे दिन सबेरे फिर वहाँ तक गये, जहाँ तक पहिले दिन हो आये थे। वहाँ से ढूँढ़ना शुरू किया। करीब एक मील दूर जाकर नाले में एक बड़ा पेड़ देखा, जिसकी पींड़ में खून लगा पाया। ऐसा मालूम

पड़ता था कि उसीके नीचे से निकलकर शेर गया है और उसीके बदन का खून लग गया है। बड़ी होशियारी के साथ बन्दूकों के घोड़ों को दोनों पाये पर चढ़ाकर पूरे नाले पर हम चार आदमी चले—मैं दाहिने तरफ, एक आदमी बायें तरफ और दो बीच में। हमारे बीच में करीब १५-१५ फुट का अन्तर था। इस तरह एक मील तक गये। वहाँ पानी मिला, मगर ऐसा मालूम होता था, कि वहाँ उसने पानी पिया ही नहीं, क्योंकि वहाँ पर उसका कोई निशान हमको नहीं मिला। वहाँ से थोड़े आगे तक गये तो दाहिने तरफ का जंगल ख़तम हो गया, सिर्फ़ बायें तरफ का बचा। बायें तरफ खूब ढूँढ़ा—३-४ मील तक गये—लेकिन पंजों का या खून का कोई भी निशान नहीं मिला। शाम होने पर घर चले आये।

इसके तीसरे दिन गिद्ध उड़ते दिखायी दिये। इब्राहीम गया और जहाँ पर दाहिने तरफ का जंगल ख़तम हो गया था उसके सामने ही मैदान में एक बड़े पीपल के पेड़ पर गिद्ध बैठे देखे। जब वह आगे बढ़ा तो शेर दूसरी तरफ मरा पाया। उसे रात को ज़रक (लकड़बाघ) ने चीर डाला था; उसका चमड़ा खराब हो गया था, कुछ ही अच्छा था। कुछ अच्छा चमड़ा, सिर और नाखून उठाकर ले आये। उसके नाखून उस शेरनी के नाखूनों से, जिसे हमने मार्च में मारा था, दुगुने से भी बड़े थे। वह शेर बहुत बड़ा था और उसके नाखून मेरे पास हैं मगर चमड़ा नहीं है। जो हाँकेवाले हमारे पास थे उन्होंने कहा कि साम्हर पर किया गया फैर, हमने सुना ही नहीं

क्योंकि हवा जोर से चल रही थी और इसीसे शेर निकला भी।

* * *

शेर के शिकार में जैसी बन्दूक की जरूरत पड़ती है उसका ज़िक्र नीचे लिखते हैं—सुपरमेगनम एक्सप्लोरा १२ नम्बर या १० नम्बर की ठीक होती है। १२ नम्बर से छोटे बोर की बन्दूक नहीं होनी चाहिए और राइफल ४०० बोर से कम की काम नहीं देती। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इससे छोटे बोर की बन्दूक या राइफल होने पर शेर नहीं मार सकते। शेर तो लोगों ने ३२-४० और २२ बोर की बन्दूक से भी मारे हैं, मगर वे लोग बहुत बड़े निशानेबाज़ थे और उनको बहुत अच्छी जगह से निशाना लगाने को मिला था। हर किसी का काम नहीं है कि वह ३२-४० या २२ बोर बन्दूक से शेर मार ले। ऐसे छोटे से हथियार से ऐसी भारी शिकार खेलना बड़ी भारी गलती है, क्योंकि अगरचे गोली ठीक जगह पर नहीं लगी तो जानवर यकीनी नहीं मिलेगा। सिवाय इसके, जो लोग हाँके में हों, उनकी जान जोखिम में पड़ेगी और शेर के ज़ख्मी हो जाने पर उसका कोई अंग कमज़ोर हो जावेगा और वह आइन्दा बड़ी जंगली शिकार न मार सकेगा तो गाँव के आसपास आकर बसेगा जिससे उसे वहाँ के ढोर वगैरह मिलें। अगर वह ज़्यादा कमजोर हो गया तो आदमखोर भी हो जायगा। हरएक शेर ऐसा न हो, लेकिन मुमकिन है कि ज़्यादातर ऐसे ही होंगे। शिकारी का यह फ़र्ज़ है कि जब वह शेर के माफ़िक जंगली जानवर

पर गोली चलाकर उसे घायल करे तो उसके पीछे ज़रूर जावे और उसे विना मारे न छोड़े ताकि उसके फैल से दूसरों को किसी किस्म का नुकसान न पहुँचे।

अव अगरचे शिकारी के पास जबकि उसने शेर को घायल किया है, छोटा हथियार है और जंगल में उसका पीछा करना पड़ा तो यकीनी उसकी निज की जान का ख़तरा है। इन सब सबबों को देखते हुए यह ज़रूरी है, कि हमेशा ऐसा हथियार अपने पास रखे, कि जिसकी गोली अगरचे ठीक जगह पर भी न लगे तोभी शेर इतना बेकाम ज़रूर हो जावे कि वहाँ से भागकर न जा सके और शिकारी को दूसरी गोली मारने का मौका मिल जावे।

*　　*　　*

अव यहाँ पर शेर की चालाकी का एक वाक़्या लिखता हूँ। जव मैं नागपुर में था, तब वहाँ पेंच नदी के ब्लाक का पर्मिट लिया था। उस ब्लाक में एक वहुत पुराना शेर था, जो गारा तो ज़रूर करता था मगर हाँके में शिकारी की तरफ़ से कभी नहीं निकलता था; कभी बाजू से और कभी ह केवालों की तरफ से कट जाता था। पाँच-सात मर्तबा इस शेर को हँकवाया मगर वह कभी सामने से नहीं निकला। उसकी चालाकी यह थी कि जब हाँकेवाले उसे शिकारी के करीब तक ठेल ले आते थे, तब वह बड़े ज़ोर से आवाज करता था और हाँकेवाले हट जाते थे; फिर वह वहाँ से निकल जाता था। कभी कभी वह आड़ियों की तरफ से भी निकल जाता था। आख़ीर मर्तवे जब उसे हाँका तो उसकी

ये दोनों चालाकियाँ कामयाब न हों, इसलिए पीछे के हाँकेवालों को दो बन्दूकें दीं और आड़िये न देकर उनकी जगह दोनों तरफ क़रीब आठ-आठ फुट की दूरी पर १०० फुट तक गजट के कागज लगा दिये। हाँकेवालों से कह दिया कि जब शेर आवाज़ करे तो हवा में फैर चलाना। जब शेर ने आवाज़ की तो उन्होंने हवा में फैर कर दिये। फैर होने पर वह पीछे न जाकर ज़ोर से आगे बढ़ा और उसने बाज़ू से कटना चाहा। जब बाज़ू को गया तो गजट के बड़े बड़े कागज देखकर, वहाँ से न जाकर आवाज़ देता हुआ शिकारी की तरफ आया और हमारे मचान के पास से निकला। उसकी गर्दन पर जोड़कर फैर किया और वह वहीं पर गिर पड़ा। गर्ज़ ये कि जब हाँकेवाले कम हों और होशियार आड़िये न मिलते हों तो दोनों तरफ उनकी जगह में सफेद गजट के बड़े बड़े कागज लगाने से आड़ियों का काम अच्छी तरह निकल सकता है।

* * *

सन् १६२६ का ज़िक्र है कि सलैया स्टेशन से तीन मील दूर भकरवारा गाँव से, जोकि मौलवी माला की जमींदारी में है, ख़बर आयी कि एक शेर रोज रात को गाँव के पास के नाले में पानी पीता है। शुरू जून का वक्त था और गर्मी बहुत ज़ोरों से पड़ी थी। ऐसे समय में मैं और मेरा शिकारी जबलपुर से सलैया पहुँचे। वहाँ से बैलगाड़ी में बैठकर भकरवारा गये। जब वहाँ पहुँचे तब शाम हो गयी थी। रात



बाघ पानी पर आ रहा है। पृष्ठ ३२

को एक गोंड़ की परछी में ठहर गये और सबेरा होने पर नाले को अच्छी तरह देखा तो शेर के खोज पानी के आसपास मिले। पानी के पास जगह तजबीजकर पड़ा बाँधने का हुक्म हमने दे दिया और अपने मुक़ाम पर लौट आये।

करीब तीन बजे दोपहर के बाद खबर मिली कि १½ कोस दूर एक गाँव में पिछली रात को गारा हो गया। हम लोग उस गाँव को ४ बजे शाम को रवाना हुए, पर फिर भी, नाले के पास जो जगह तजबीज की थी, वहाँ पड़ा बाँधने को कह गये। उस गाँव पर करीब ६ बजे शाम को पहुँचे और देखा कि शेर ने एक बड़ी गाय मार ली है और उसकी गर्दन तोड़कर थोड़ासा हिस्सा खा भी लिया है। गाय गाँव की बिलकुल जड़ में मारी थी। वहाँ एक आम का पेड़ था, जिस पर मचान बाँधकर बैठ गये। करीब १२ बजे रात तक बैठे रहे मगर शेर नहीं आया। हम लोग उतरे और गाँव के दो आदमी साथ ले, भकरवारा को वापिस हुए। जब भकरवारा के पास आये तब नाला पार करने के पहिले यह ख्याल हुआ कि कहीं शेर यहाँ गारा न करता हो, इसलिए दो फलाँग दूर से नाले को पार कर गाँव में आये। बड़े सबेरे गये तो देखा कि पड़े के दोनों पुट्ठों पर शेर के पंजों के निशान हैं, लेकिन उसकी गर्दन शेर ने नहीं तोड़ी। उसे खोलकर हम ले आये। शेर के खोज भी पानी के पास मिले। हम समझते हैं कि

जब हम भकरवारा लौट रहे थे, तब वह पड़े को मार रहा था और हमारी आहट पा हट गया।

यह नाला उत्तर से दक्खन को बहता था। इस गाँव से एक मील दूर नाले के दोनों तरफ घना जंगल था, जहाँ शेर के रहने की जगह थी लेकिन वहाँ पानी न था। नाला इस समय सूख गया था और वहाँ कई मील तक पानी नहीं था। शेर के रहने की जगह से १½ मील उत्तर तक नाला बिलकुल सूखा था और पहिला डबरा भकरवारा गाँव की जड़ में था। चूँकि ये पानी १०० गज़ लम्बा था और बैठने की जगह सिर्फ एक ही पेड़ पर थी, जो उत्तर की तरफ था इसलिए ये ख़्याल हुआ कि शेर जब आयगा तब दक्खन की तरफ के डबरे में पानी पीवेगा और रात को गोली १५० गज़ की दूरी से मारना पड़ेगी। इससे हमने यह सोचा कि जब तक इब्राहीम पेड़ पर मचान बँधवाता है, तब तक आसपास पड़ी हुई सब सूखी पत्ती पानी में बिखरा दी जावे। इसलिए चार कुली लिये और दक्खन की तरफ के ५० गज़ पानी पर पत्ती डाल दी। शेर के आने के रास्ते पर भी पत्ती डाल दी, ताकि उसके आने की आहट मिले। अब सिर्फ़ ५० गज़ में ही पानी दिखता था।

जिस पेड़ पर इब्राहीम मचान बँधवाता था वह नाले मेंसे ऊगा था और कोई २० फुट ऊँचा था। यहाँ पर कगारा १२-१३ फुट ऊँचा था। कगारा के ऊपर सम मैदान था,

जिसमें झाड़ियाँ थीं। मचान में एक खाट बाँध ली और खाट से एक फुट भर ऊपर बाँस की कमची चारों तरफ लगायी और बैठ गये। कमची बन्दूक को सहारा देने के लिए थी। ऊपर एक घड़ा पानी का भी रख लिया। जिस समय मचान पर बैठे तब ५½ बजा था। थोड़ी देर में नाले के दूसरे बाजू, याने दाहिने तरफ देखा तो एक सड़े पेड़ में कलाई के बराबर मोटा, करीब १० फुट लम्बा साँप लिपटा था। थोड़ी देर में एक दूसरा साँप, करीब उतना ही लम्बा, लेकिन उससे पतला, पेड़ मेंसे निकला और दोनों ऊपर-नीचे चढ़ने-उतरने लगे। पड़ा उसी पेड़ के नीचे बँधा था। यही तमाशा देखते देखते शाम हो गयी।

रात तो चाँदनी थी, मगर अब बदली हो आयी। नाले में अब ऐसा अँधेरा हो गया कि कुछ भी दिखायी नहीं देता था। पड़ा भी नहीं दिखता था। गर्मी बहुत लगती थी और मच्छड़ भी काटते थे। हर आधा घंटे में पानी पीते थे। रात को करीब ६ बज गये। अँधेरा इतना बढ़ गया कि हमारे मचान पर बैठा हुआ इब्राहीम नहीं दिखता था, अपना खुद का हाथ भी नहीं दिखता था। इस समय हमने अपनी बड़ी एक्सप्लोरा पर टार्च बाँध लिया।

हम बिलकुल चुपचाप बैठे हुए थे कि इतने में इब्राहीम ने धीरे से अपना हाथ हमारे पैर में लगाया। हम चौंक उठे, कि कहीं साँप तो नहीं आ गया। उसने धीरे से कहा, कि शेर पानी

पर आता है—पत्ते की आवाज़ आयी। हमको कम सुनाई पड़ता है—हमने सुना कि शेर आ गया। धीरे से हमने राइफ़ल दिन को तजवीज की गयी जगह पर रखकर टार्च जलाया और उसका उजेला पानी पर पड़ा। इब्राहीम ने झट से हाथ रोका कि टार्च बुझा दो। हमने वहाँ देखा कि कोई जानवर नहीं है और झट से टार्च बुझा दिया।

अब शेर जो पानी पर आ रहा था, लेकिन आड़ में था, उजेला देखकर पानी पर नहीं आया और घूमकर ऊपर किनारे पर चढ़ा। वह हमारे पेड़ की बराबरी से करीब १५ फ़ुट दूर झाड़ी के पीछे आकर खड़ा हो गया। पहिले तो २० मिनट तक वह सन्नाटा मारे रहा, लेकिन फिर वह गुर्र, गुर्र आवाज़ करने लगा। करीब डेढ़ घंटे तक इसी तरह आवाज़ देकर हमको डरवाता रहा। हमने और इब्राहीम ने बन्दूकें तो जोड़ लीं लेकिन चुपचाप बैठे रहे, बिलकुल भी हिले-डुले नहीं। मच्छड़ भी खूब काटते रहे लेकिन इस डर से कि कहीं शेर तक आहट न पहुँचे, खुजाया तक नहीं। अब इसी तरह दो घंटे बीत गये। फिर जब उसे इतमीनान हो गया कि यहाँ कोई आदमी नहीं है, तब वह चला गया। इब्राहीम ने हमको इशारा किया कि शेर गया। करीब आधा घंटा के बाद इब्राहीम को किसी जानवर के पानी पीने की आहट मिली मगर आवाज़ ऐसी धीमी थी, जैसे कोई छोटा जानवर पानी पीता हो। वह ठहर ठहरकर ५ मिनट तक पानी पीता रहा जिससे इब्राहीम ने समझा कि हो न हो ज़रूर शेर पानी पी रहा है,

पृष्ठ ३७



बाघ पानी पी रहा है ।

क्योंकि छोटा जानवर इतनी देर तक पानी नहीं पीता। इब्राहीम ने हमको इशारा किया। हमने अपनी बन्दूक फिर पहिली जगह रखी और घोड़े चढ़ाकर उजेला फेंका। उजेले में देखा कि शेर पेट के बल लेटकर पानी पी रहा है, मगर हमको बंद से सिर तक ही दिखायी दिया, पूरा धड़ नहीं दिखता था। हमने उसकी गर्दन और सिर के जोड़ पर जोड़कर गोली चलायी। यह इतनी जल्दी हुआ कि शेर पानी से सिर उठाकर देख तक नहीं पाया था और फिर हमने एकदम टार्च बुझा दिया। एक मिनट के बाद फिर उजेला फेंककर देखा तो शेर का सिर दाहिनी तरफ को गिर गया था। इब्राहीम ने कहा कि दूसरा फ़ैर करो। हमने कहा कि नहीं; हमने गर्दन पर गोली मारी है, वह ज़रूर मर गया है, नहीं तो चला जाता। यह कहकर हमने टार्च बुझा दिया। पाँच मिनट के बाद उजेला करने पर उसे उसी हालत में पाया। इब्राहीम ने फिर फ़ैर करने को कहा, लेकिन हमने ऐसा न कर एक खाली कारतूस फेंककर मारा। वह शेर को लगा, पर वह हिला-डुला नहीं।

जब शेर हिला नहीं तब हमने बन्दूक में भरकर दो बक-शॉट एक-एक मिनट के अन्तर से हवा में चलाये। गाँववालों से यह तय कर लिया था, कि जब हम दो फ़ैर एक-एक मिनट के बाद करें तो हमको उतारने को आना। गाँव सिर्फ़ एक फ़र्लांग दूर था। वहाँ से शिकारी लालटेन वगैरह लेकर चले। वे गाँव के तरफ की झाड़ी के उस पार से पूँछने लगे कि

काहे पर फैर किया। हमने कहा कि शेर पर फैर किया और वह मर भी गया। वे बोले कि फिर फैर मारो। हमने हवा में फैर कर दिया और कहा कि गोली मार दी। तब वे आधा मील का चक्कर लगाकर हमको उतारने को आये। उन्होंने पेड़ पर सीढ़ी लगायी और हम उतर आये। बन्दूक भरकर हम और इब्राहीम नाले में उतरे; गाँववाले कोई भी हमारे साथ नहीं गये। जब हमने उसकी पूँछ उठायी तब वे पास आये। देखने पर पता चला कि गोली कान के नीचे लगकर आँख मेंसे निकल गयी है। उसी सीढ़ी पर शेर को लिटाकर गाँववालों के कंधे पर उठवाकर गाँव में लाये। बाद में हमने खाना खाया।

उसी दिन शाम को हमको खाँसी आयी थी। इसलिए अदरख आधा भूनकर उसके टुकड़ेकर खीसे में रख लिया था और एक टुकड़ा दाँत के नीचे दबाकर इसे चूसते रहे। खाँसी नहीं आयी। जब उसे मुँह मेंसे निकाल दिया तब ही खाँसी चली। यह दवाई ऐसी है कि यह शिकारी के पास शिकार करते वक्त हरदम होना चाहिए। इसे शिकारी मुँह में डाल ले; जब तक मुँह में अदरख रहेगा, तब तक खाँसी नहीं आवेगी।

* * *

बहुतसे आदमी शेर के हाँके में बन्दूक लेकर जमीन ही पर बैठ जाते हैं, मगर ऐसा करना बड़ी भारी गलती है। जब तक शिकारी बड़े इतमीनान का न हो, याने जिसको अपने

निशाने का वहुत भारी भरोसा हो और उतनी ही हिम्मत भी हो, तव तक जमीन पर न वैठे; हमेशा पेड़ पर या कोई ऊँची जगह पर वैठे ताकि अगर शेर घायल हो जाय तो उसको दूसरा फैर भी मार सके।

सन् १९२४ का ज़िक्र है, कि हमने वघराजी व्लाक का पर्मिट लिया था और जाकर सुनावल में ठहरे थे। हमारे साथ में शिकारी अव्दुल्ला और मुहीयुद्दीन थे और श्री० अम्बिकाचरन दे भी हमारे साथ गये थे। वे खुद वन्दूक नहीं चलाते, लेकिन शिकार देखने का उनको भारी शौक है इसलिए हमारे साथ अकसर जाया करते थे। हमको कम सुन पड़ता है इसलिए एक आदमी हमेशा अपने पास वैठाते हैं और अक्सर इनको ही वैठाते थे। ये हमारे साथ इसके पहिले १५-२० वार शिकार में हो भी आये थे।

जव हम सुनावल पहुँचे तो वघराजी का एक नया शिकारी आया और वह भी मालगुजारी कोठे में ठहर गया। उसने अपनी शिकार की वहुत लम्वी चौड़ी गप्पें झाड़ीं और अम्बिका वावू ने उसे सुनकर उसपर वहुत भरोसा कर लिया मगर उनको उस पर ऐसा भरोसा नहीं करना था, जैसा कि आगे मालूम होगा।

सवेरा होते ही मुहीयुद्दीन को भेजा कि देख आओ रात को गारा हुआ या नहीं। उसने आकर खवर दी कि गारा तो नहीं हुआ लेकिन शेर पड़े के आसपास रात को

चक्कर लगाता रहा है; उसके पंजों के निशान वहाँ मौजूद हैं। चूँकि जंगल का यह हिस्सा घाटी पर था और बहुत घना था और वहाँ शेर के रहने की जगह थी, हमने तजवीज की कि ये शेर पुराना और चालाक है इसलिए इसे हाँक लेना चाहिए।

हमारा ये उसूल है कि हम पड़ा बँधवाने के पहिले ही मचान बँधवा देते हैं। इसलिए हमने उस दिन के पहिले ही तीन मचान तैयार करा लिये थे। ऐसा हम इसलिए करते हैं कि गारा हो जाने पर फिर मचान बाँधने में लकड़ी वगैरह के काटने की आवाज़ होने से शेर छड़क जाता है। करीब दोपहर के हम लोग उस घाटी पर पहुँचे और अपने अपने मचानों पर बैठ गये। मचान तीन ही थे और यह नया शिकारी चौथा था, इसलिए इसने जंगल में घुसते ही एक पेड़ के नीचे बैठना पसन्द किया। अम्बिका बाबू भी उसीके साथ बैठ गये। अब हाँका करना शुरू हुआ।

जिस पहाड़ को हँकवा रहे थे वह करीब एक मील लम्बा था और हाँका शुरू होने पर ऐसा मालूम हुआ कि इसमें शेर है। हमारे सामने या और दूसरों के सामने जो कि मचान पर बैठे थे शेर नहीं निकला। वह झाड़ियों मेंसे इस तरह से कट गया, कि नये शिकारी के पास ही निकला। दिसम्बर का महीना था और ठंड खूब पड़ी थी। जब हाँका करीब आधा होने को आया तो नये शिकारी ने अपने कुल

कपड़े उतार दिये, सिर्फ धोती भर पहिने रहा और उसे भी लँगोट के माफ़िक कर लिया। वह पेड़ की डालियों को देखने लगा और उसने अम्बिका बाबू से कहा कि, "सँभलकर बैठना, ऐसा दिखायी पड़ता है कि शेर इधर ही से निकलेगा।" अम्बिका बाबू ने देखा कि वह बिलकुल सिकुड़ गया है और उसके खूब पसीना निकल रहा है। वे सरककर उसीकी पीठ से सटकर बैठ गये। उन्होंने देखा कि शायद ये पेड़ पर चढ़ेगा, इससे उसकी कमर को दोनों हाथों से पकड़ लिया।

इतने में देखा तो सामने से शेर चला आ रहा था। नये शिकारी ने पेड़ पर चढ़ने की कोशिश की लेकिन वह चढ़ नहीं सका, क्योंकि अम्बिका बाबू उसे पकड़े बैठे थे। उसकी छाती जोर से धड़क रही थी। उसने बंदूक नीचे रख दी और सन्नाटा मारकर रह गया। शेर का मुँह इनकी तरफ न था। हाँका दाहिनी तरफ से आ रहा था और वह भी उसी तरफ से निकला। इतने में बायें तरफ से खटर-खटर की आवाज़ आयी और शेर उत्तर की तरफ को मुड़ गया। दक्खन की तरफ से खड़ाऊँ पहिने फारेस्ट-गार्ड चला आ रहा था और वह इन लोगों के पास से ही निकला। इन्होंने कहा कि शेर है। उसने अम्बिका बाबू की कमर पकड़ ली और वहीं बैठ गया। उस नये शिकारी को इतना पसीना निकला कि अम्बिका बाबू के सब कपड़े भींग गये।

हम लोग उतरकर चले आये। जब शेर को गये थोड़ी देर हो गयी तब ये लोग भी वहाँ से चले। उस नये शिकारी का पता नहीं चला। डेरे पर आकर अम्बिका बाबू ने बताया कि हमने शेर देखा था। वहाँ यह भी पता चला कि एक बार जब एक गड़रिये के घर में गुलबाघ घुसा था तब इस शिकारी ने खपरे हटाकर उसे गोली मारी थी। इसके अलावा उसने कभी भी गोली नहीं चलायी थी। इस किस्से को सुनकर हम लोग हँसी से लोट-पोट हो गये।

इस वाक़्ये को लिखने की गर्ज़ ये थी कि शिकारी ज़मीन पर तो बैठ गया, लेकिन गोली नहीं मार सका; अगर उसने फैर किया भी होता तो शेर को गोली लगती भी नहीं और उल्टा वह इन लोगों को खा जाता। इस तरह से यह शेर खो गया।

* * *

सन् १९३० का ज़िक्र है कि हम दिसम्बर की छुट्टी में लखनपुरा गये थे। इस गाँव को जाने के लिए जबलपुर से दमोह सड़क पर तीस मील तक जाना पड़ता है, वहाँ से गुबरा गाँव के साम्हने से पूर्व को एक रास्ता फूटा है। उस रास्ते पर तीन मील जाने पर एक कटाव मिलता है; कटाव पर दो नदियों का संगम है, एक कायर और दूसरी फलगू। ये कटाव कैमूरा पहाड़ का हिस्सा है और चूँकि कायर नदी इस पहाड़ को काटकर बहती है, इसलिये इसका नाम कटाव पड़ा है।

यहाँ पर पहाड़ कम से कम दो हजार फुट ऊँचा है और जमीन से कम से कम १०० फुट नीचे तक नदी ने उसे काट दिया है।

यह स्थान बहुत रमणीक है। नदी पहाड़ मेंसे गोलाई लेती हुई निकली है और यहाँ पर नदी और रास्ता को मिलाकर करीब १०० फुट चौड़ा है। रास्ता करीब ३० फुट चौड़ा है। दोनों तरफ दो-दो हज़ार फुट ऊँचे लाल रंग की चट्टानों के पहाड़ दीवाल के समान खड़े हैं। रास्ते से नदी में पहुँचने के लिए पहाड़ काटकर करीब १०० सीढ़ियाँ बनायी गयी हैं। यहाँ पर नदी का पानी बहुत गहरा है और नीले रंग का दिखता है। बीच-बीच में काले रंग की चट्टानें यहाँ-वहाँ द्वीप के समान निकली हैं। पानी उनसे टकराता है और फेन की सफेदी लेकर गोल घूमता हुआ आगे बढ़ता है। कहीं कहीं पानी थोड़ी ऊँचाई से नीचे गिरता है और बहुत सुहावना दिखायी देता है। पहाड़ की चट्टानों पर पेड़ हैं, जो बिलकुल हरे भरे रहते हैं और उनके नीचे खासी ठंडाई रहती है। इसी घुमाव पर नदी के बाजू में एक छोटा-सा मन्दिर भी बना है। इस तरह से कई रंगों के मिलने से और एकान्त होने से यहाँ बहुत भला लगता है और दिल यहाँ से हटने को नहीं चाहता।

सन् १६०० के पहिले यहाँ पर रास्ता न था, लेकिन उस साल अकाल पड़ा था, तब सरकार ने इसे बनवाया था।

उस समय फुलर साहब (J. B. Fuller) जबलपुर में कमिश्नर थे [ये बाद में बंगाल के लेफ्टिनेंट गवर्नर हो गये थे] और उनका नाम संगमर्मर के पत्थर पर लिखकर इसी घुमाव पर पहाड़ में लगा दिया था। उस समय यह रास्ता बहुत खतरनाक था, यहाँ तक कि जिस ठेकेदार ने इसे बनवाया था, अच्छी तरह बन जाने पर वह मंदिर भी बनवा दिया था। उस समय वहाँ शेर दिन को भी पानी पीते थे। सन् १८६६ की गर्मी का ज़िक्र है, कि कायर नदी के कुंड के पास की झाड़ी में शेरनी अपने दो बच्चों को लेकर आराम कर रही थी। बच्चे निकलकर कहीं पानी पर आ गये थे। उसी समय एक शेर भी वहाँ पानी पी रहा था। उसने नर बच्चे को पकड़कर झँझोल डाला। अपने बच्चे की आवाज सुनकर शेरनी झाड़ी मेंसे दौड़ पड़ी और शेर को पकड़ लिया। वे दोनों दिन भर लड़े और करीब शाम को शेरनी शेर को मारकर चली गयी। जब तक उनमें लड़ाई होती रही खूब आवाज़ हुई। दूसरे दिन सवेरे पास के गाँव के आदमियों ने जाकर देखा तो शेर और एक बच्चा मरे पड़े थे। शेर और शेरनी के लड़ने के निशान वहाँ मौजूद थे और खून भी खूब बहा था। शेर के बदन पर नाखूनों के बहुत निशान थे। शेरनी का पता नहीं लगा। पाठक हमको माफ़ करेंगे कि हम जिस विषय को लिख रहे थे, उसे छोड़कर इस विषय पर कलम चलायी।

इस कटाव से करीब आधा मील आगे बढ़ने पर बायें तरफ एक कच्चा रास्ता मिलता है। यह रास्ता कैमूरा पहाड़

के नीचे नीचे गया है। इस पर ६ मील तक गये। वहाँ मड़ौत गाँव में मोटर छोड़ दी। मोटर में हमारे साथ अम्बिका बाबू और हमारे दामाद मिस्टर सिन्हा भी थे। बैलगाड़ियों में शिकारी अब्दुल्ला और मुहीयुद्दीन दो रोज़ पहिले से सामान, तम्बू वगैरह लेकर चले गये थे।

अब हम लोगों को पहाड़ पार करना था। पहाड़ बड़ा ऊँचा था। दो घंटे में ऊपर पहुँच पाये। ४ बजे शाम को चढ़ना शुरू किया था और ६ बजे शाम को कहीं उस पार पहुँचे। चढ़ते-चढ़ते बहुत थक गये। मुश्किल से पहाड़ पारकर लखनपुरा पहुँचे। पहाड़ और लखनपुरा के बीच में कायर नदी पड़ती है। गाँव में कोई १०-१५ आदमियों की बस्ती है। उसके आसपास घना जंगल और ऊँचे-ऊँचे पहाड़ हैं।

गाँव से करीब १०० गज़ की दूरी पर एक पीपल का पेड़ है; उसीके नीचे तम्बू लगाया गया था। उससे करीब १५ फुट दूर एक रसोईघर तैयार किया था। लकड़ी की थुनियाँ गाड़ दी थीं और ऊपर भी थुनियाँ डालकर पत्ते छा दिये थे। चारों तरफ भी पत्ते ही लगा दिये थे। इस तरह का रसोईघर बना था। उससे कोई २० फुट दूर ऐसा ही एक मड़वा और तैयार किया था, जिसमें रात-दिन आग रहती थी और हम लोग उसको तापकर अपनी ठंड दूर करते थे, क्योंकि वहाँ पहाड़ से घिरे रहने के सबब ठंड बेहद पड़ी थी।

सवेरा होने पर दौनी के मालगुजार हबीब अहमदखाँ और बिछिया के मालगुजार हबीबुल्लाखाँ भी आ पहुँचे। अब शिकारियों का काफ़ी जमाव हो गया। दिन को हमने एक मील उत्तर को जाकर हाँका कराया और एक साम्हर मारा। फिर उस दिन लौट आये और रात को एक मील दक्षिण की तरफ कारीवराह में पड़े बँधवाये। पड़े दूर बँधे थे, इसलिए दूसरे दिन हम लोगों ने कहा कि अभी उत्तर की तरफ और हाँक लेंवे, शायद कोई जानवर मिल जावे। जब गारा होगा, तब दक्षिण की तरफ हाँका करेंगे। लेकिन उस दिन हबीबुल्लाखाँ के सिर में दर्द हुआ, इसलिए उनको एक आदमी साथ दे, घोड़े पर बैठाकर घर वापिस करा दिया।

ख़ैर, जंगल हाँकना तय ठहरा। हँकैये बोले कि यहाँ पर शेर नहीं है, साम्हर है। हम लोग नीचे ही जमीन पर बैठ गये। जहाँ पर हम बैठे थे, उसके दाहिने-बायें ५०-५० फुट गहरे खड्ड थे और सामने कोई १० फुट चौड़ी रीघड़ थी, जिस पर कमर बराबर घास और घनी झाड़ियाँ थीं। सब जंगल भरकों का है। दो हाँकों में तो कुछ भी नहीं निकला। तीसरे हाँके में हमारे पास गाँव के मालगुजार के छोटे-छोटे तीन लड़के भी बैठ गये थे। हमने उनसे घर चले जाने को कहा, लेकिन हाँका शुरू हो जाने से वे नहीं गये। जब हाँका करीब आ गया, तब एकाएक हमारे सामने २० फुट दूर से एक शेर ऊपर को चढ़ा। उस पर पहिले-पहिल अम्बिका

बाबू की नज़र पड़ी। उन्होंने इशारा किया कि शेर है। हमारे हाथ में उस वक्त ४०० बोर की राइफ़ल थी। हमने देखा कि शेर पीछे लौट नहीं सकता और अगर आगे बढ़ेगा तो हमारे ऊपर ही आ जायगा, इसलिए खड़े होकर, गर्दन जोड़कर गोली चलायी। शेर गिर पड़ा। वह एक गड्ढे में गिरा इसलिए नहीं दिखता था, इससे हम आगे बढ़े। बिलकुल एक ही कदम बढ़े थे कि अम्बिका बाबू ने पीछे से कोट पकड़कर रोक लिया। करीब १० मिनट बाद शेर वहाँ से उठा और बायें तरफ के खड्ड से निकलकर झाड़ियों में से भागा। जब वह हमारी बराबरी से आगे निकल गया तब लड़कों की नज़र उस पर पड़ी और वे बोले कि शेर जाता है। बंदूक जोड़नी चाही, लेकिन झाड़ियों के सबब से जोड़ नहीं सके और वह निकल गया।

शेर को निकले एक ही मिनट हुआ होगा कि फैर की आवाज़ आयी। दूसरे लग्गे पर मिस्टर सिन्हा और शिकारी अब्दुल्ला बैठे थे। हम समझे कि उन्होंने शेर मार लिया। दस मिनट के बाद हम वहाँ गये। मालूम हुआ कि जमाई बाबू और अब्दुल्ला जमीन पर ही बैठे थे और शेर नीचा सिर किये उनकी तरफ चला जा रहा था। वे ऐसी जगह बैठे हुए थे कि शेर के जाने का रास्ता उन्हींके ऊपर से रहता। जब शेर करीब २५ फुट पर आ गया तब अब्दुल्ला ने हँ हँ की आवाज़ खाँसकर की और इस खाँसने की आवाज़ सुनकर शेर ठिठक गया। अब्दुल्ला ने फौरन उसके मुँह पर

फ़ैर मारा। शेर फ़ौरन लौट पड़ा और अपने बायें तरफ़ की खाई में घुस गया। सिन्हा साहब भी उसीको जोड़े हुए थे, मगर अब्दुल्ला का फ़ैर पहिले हो गया था और शेर भी खाई में फ़ौरन ही कूद गया था, वे फ़ैर नहीं कर सके। शेर पर गोली पश्चिम की तरफ़ को चलायी गयी थी और वे भी अपनी बन्दूक उसी तरफ़ जोड़े हुए थे। उन्होंने अपना मुँह पश्चिम से दक्षिण की तरफ़ को फेरा तो देखा कि उनसे १५ फ़ुट की दूरी पर खड़ा-खड़ा एक दूसरा शेर उनकी तरफ़ देख रहा है। इनका मुँह भर दक्षिण की तरफ़ को था, बन्दूक पश्चिम की तरफ़ ही थी और अब्दुल्ला भी उसी तरफ़ को शेर की तलाश में देख रहा था। सिन्हा साहब की बन्दूक वैसी ही रह गयी; शेर इनको और ये शेर को एक मिनट तक देखते रहे। इसके बाद शेर ने कूदकर चल दिया।

अच्छा, दस मिनट के बाद जब हम उनकी तरफ़ गये तो हमने सीटी दी। तब अब्दुल्ला बोला कि चले आइयें, शेर चला गया। हम उनके पास उस गड्ढे मेंसे उतरकर गये थे जिसमें शेर हमारी गोली लगने के बाद गिरा था। वहाँ उसके पैर के निशान थे और खून भी गिरा था। इससे मालूम हुआ कि उसे गोली लगी थी। जिस जगह अब्दुल्ला ने फ़ैर किया था वहाँ भी खून मिला। अब्दुल्ला से पूछने पर मालूम हुआ कि उसकी बन्दूक में बक-शॉट भरा था और वही उसने शेर के मुँह पर मारा। वह बोला कि हम तो

साम्हर के भरोसे में यही भरे बैठे थे और अगर न मारते तो वह हमारे ऊपर ही आ टूटता और फिर हमारी ख़ैर नहीं थी।

हम सब शिकारी इकट्ठे होकर थोड़ी दूर गये। खून खूब मिलता था और कहीं कहीं तो डबरे भरे मिलते थे। लेकिन वहाँ भरके ही भरके थे इसलिए ये सलाह ठहरी कि दो शिकारी तो खून के पीछे पीछे जावें और दो शिकारी घूमकर आगे जावें और उस जगह मिलें जहाँ शेर गया है। मुहीयुद्दीन और हबीब अहमदखाँ तो खून के पीछे पीछे गये और हम अब्दुल्ला के साथ नदी मेंसे गये। करीब १½ मील चलकर नदी में एक टापू मिला, जिस पर १०-१५ कोहे के पेड़ हैं। हम लोग उन्हींकी आड़ में खड़े हो गये।

यहाँ पर यह बात याद रहे, कि नदी के पश्चिम की तरफ वह भरका है जिसमें से ये लोग आ रहे थे और पूर्व में २,००० फुट ऊँचा वह पहाड़ है, जिसे पार करके हम लोग पहिले दिन आये थे और जिसमें आधी दूर पर शेर का चुर है। हम लोग पेड़ों की आड़ में खड़े हुए ही थे कि हबीब अहमदखाँ ने आवाज़ दी कि सम्हलकर खड़े रहना, शेर इसी तरफ से गया है। हम लोग करीब १० मिनट तक बन्दूक जोड़े खड़े रहे। इतने में ये लोग भी भरके मेंसे निकल आये। जहाँ से ये लोग निकले थे वहाँ पर एक नाला

नदी में मिला था और उसी रास्ते को रोकने के लिए हम लोग खड़े थे। वह नाला हमारे करीब १० फुट आगे था। वे बोले कि शेर यहाँ से पहिले ही निकल गया है। यहाँ पर खून गिरा है। हम लोगों ने देखा तो खून नदी के दोनों तरफ मिला। कुछ दूर तक पहाड़ में भी खून के पीछे पीछे गये। कुछ दूर तक तो शेर चढ़ा था लेकिन फिर उतरकर दूसरे रास्ते से उसी भरके में घुस गया था। इसका सबब यह था कि पहाड़ में कुछ कटैये लकड़ी काट रहे थे और उनकी आहट मिलने से वह लौट पड़ा था।

अब फिर पाँचों शिकारियों ने सलाह की, कि भरका बड़ा है, इसमें बैठ जावें और हँकवा लेवें तो शेर मिल जावेगा, क्योंकि वह पीछे नहीं जा सकता। इसलिए करीब आधा मील आगे चलकर हम लोग उसी भरके में घुसे और जहाँ-तहाँ सब लोगों को पेड़ों पर बैठा दिया, लेकिन हम बीच ही में बैठ गये, क्योंकि हमको कोई ऐसा झाड़ नहीं मिला। वहाँ पेड़ कम और झाड़ियाँ बहुत थीं। हाँका शुरू होने पर एक जानवर के आने की आहट मिली। उसी तरफ को बन्दूक जोड़कर रह गये, लेकिन वहाँ से एक बड़ा साम्हर निकला, शेर नहीं निकला। हमने उस पर गोली नहीं चलायी और जाने दिया। हाँके में और कुछ नहीं निकला। अब करीब ५ बज गये थे और शाम होने को आधा घंटा रह गया था। डेरे से भी चार-पाँच मील दूर पहुँच गये थे, इसलिए वापिस आ गये।

दूसरे दिन फिर शुरू के भरके में घुसे। खून त बराबर ५ मील तक मिला, लेकिन शेर नहीं मिला। चार रोज़ तक इसी तरह ढूँढ़ा, मगर कुछ भी नहीं मिला। उधर पड़ों का गारा भी नहीं हुआ और बड़े दिन की छुट्टी भी खतम हो गयी। इसलिए हम लोग वापिस हुए, मगर अब्दुल्ला को वहीं छोड़ आये, क्योंकि खून रोज़ ताज़ा मिलता था और शेर नहीं मिलता था। अब्दुल्ला तीन रोज़ और ठहरा। उसने सोचा कि घर वापिस तो जावेंगे ही, शेर नहीं मिलता है तो उस भरके को हँकवाकर साम्हर वगैरह ही क्यों न मार लें। वह छड़का हुआ था, इसलिए पेड़ पर मचान बाँधकर बैठ गया और फिर भरके को हँकवाया। शेर उसीके पेड़ के पास से निकला। वह बिलकुल दुबला हो गया था। अब्दुल्ला ने उसे मार लिया। उसे देखने पर मालूम हुआ कि उसे पहले दिन गर्दन पर गोली लगी तो ज़रूर थी लेकिन वहाँ की हड्डी नहीं टूटी थी। अब्दुल्ला ने जो छर्रा मारा था उससे उसका नीचे का जबड़ा टूट गया था, जिससे वह खा भी नहीं सकता था। उसका चमड़ा छीलकर अब्दुल्ला ले आया।

*　　　*　　　*

सन् १९२९ के दिसम्बर महीने में मण्डला ज़िले के मोतीनाला ब्लाक का पर्मिट लिया था। उस समय मैं नागपुर में था, लेकिन मिस्टर सिन्हा और अम्बिका बाबू से पहिले ही तय कर लिया था कि वे भी उस समय वहाँ पहुँचेंगे। हम

एक मिस्टर डब्ल्यू के साथ नागपुर से रवाना हुए और उसी दिन मिस्टर सिन्हा और अम्बिका बाबू दो शिकारियों को लेकर वहाँ को चले। उस दिन बहुत पानी बरसा और बड़ी मुश्किल से कहीं शाम तक हम लोग बिछिया के डाक-बंगले तक पहुँचे। वहाँ हमने रात काटी। पानी रात भर बरसा। हमारा सामान भी थोड़ा-बहुत भींग गया था। वहाँ से मोतीनाला करीब १६ मील दूर है और रास्ते में ३ से ६ इंच तक गिलाव था, क्योंकि वहाँ खेतों की मिट्टी रास्ते पर डालते हैं। मोटर उस रास्ते पर नहीं चल सकी; साथ में किराये की जो लारी ले गये वह भी नहीं चल सकी। अब हम लोग बड़े पशोपेश में पड़े, लेकिन फिर सोचा कि यहाँ पड़े रहकर ही क्या करेंगे ? इसलिए हम सबने सलाह की कि बैलगाड़ियों में ही मोतीनाला जावें, रास्ता सूख जाने पर फिर मोटरें वहाँ आ जावेंगी।

तारीख २४ के सवेरे ३ बैलगाड़ियाँ किराये कर हम लोग मोतीनाला को रवाना हुए। हम लोगों ने दो तम्बू, एक हाथी (यह सरकारी जंगल का था) और आठ पड़े दो रोज पहिले ही वहाँ पहुँचा दिये थे। रास्ता बहुत ऊँचा-नीचा मिला इसलिए कमर मारे धक्कों के दुरुस्त हो गयी। कभी कभी तो हमको ही गाड़ी कीचड़ मेंसे ढकेलकर निकालनी पड़ती थी। शाम तक कहीं मोतीनाला पहुँचे लेकिन पहुँचते तक बिलकुल थक गये थे। झट चा बनवायी और उसे पीकर आराम किया।

रात को पानी तो नहीं बरसा मगर ठंड ऐसी पड़ी कि दिन को दस बजे तक कुहरा बना रहा और बाहर बर्तनों में जो पानी था उस पर बर्फ़ का एक पतला परत-सा जम गया था। ख़ैर, उस दिन पड़े बंधवाये और शाम को ३ बजे से ही बगाई को निकल पड़े। मिस्टर डब्ल्यू ने एक अच्छा साम्हर मारा और उनके लड़के ने, जो हमारे साथ गये थे, तीन लील मारे। इसके बाद हम लोग डेरे पर आ गये।

दूसरे दिन खबर आयी कि गारा हो गया। हम सरकारी हाथी पर बैठकर तीन मील तक गये। वहाँ देखा कि शेर ने पड़े को घास में घसीट लिया है और पिछली एक रान खा भी ली है। इस जंगल में सिवा साल के दरख़्तों के और कुछ न था और ये पेड़ एक मील के घेरे में फैले हुए थे। हरएक झाड़ कम से कम १०० फुट ऊँचा था। इस जंगल के आख़ीर में एक नाला पूर्व की तरफ से कटकर एक दूसरे जंगल में जाता है। इसी नाले के पास गारा हुआ था। हम लोग मचान बँधवाकर बैठ गये और दोपहर से ही हाँका शुरू कराया। शेर बहुत चालाक था, वह शिकारियों के सामने से न आकर नाले मेंसे कटकर निकल गया। इस तरह तीन दिन तक हाँका हुआ, मगर शेर हर दिन ऐसे ही कट जाता था और रात को लौटकर पड़े को भी खाता था।

जहाँ से उसके आने-जाने का रास्ता था वहाँ पर बेर का एक पेड़ था, लेकिन उस समय ठंड ऐसी पड़ती थी कि

किसी की हिम्मत उस झाड़ पर बैठने की नहीं हुई। वहाँ पर हम लोगों को यह भी पता चला कि ३-४ साल पहिले कोई साहब इसी झाड़ पर बैठे थे और रात को बर्फ़ गिरने पर अकड़कर रह गये। सवेरे जब आदमी उनको उतारने गये तो वे मरे मिले।

चौथे दिन उस जंगल से एक मील पश्चिम में, जहाँ पहिले दिन गारा हुआ था, नया गारा हुआ। यह जंगल साल का ही है, लेकिन बहुत घना है और इसकी खसूसियत ये है कि इसमें से कई नाले आपस में कटते हुए बहते हैं। हम लोगों ने चार मचान बँधवाये। पहिले मचान में मिस्टर डब्ल्यू के लड़के और अम्बिका बाबू, दूसरे में मैं और इब्राहीम, तीसरे में सिन्हा साहब और मुहीयुद्दीन और चौथे मचान में मिस्टर डब्ल्यू बैठे। मिस्टर डब्ल्यू के बायें तरफ को करीब आठ आड़िये थे। हाँका शुरू होने ही को था कि मिस्टर डब्ल्यू ने अपने मचान से उतरकर चार-पाँच आड़ियों को पीछे भगा दिया। जब ये आकर मचान पर बैठ गये तब हाँका शुरू हुआ। इस हाँके में हम लोगों ने ये कोशिश की थी कि शेर सिन्हा साहब के सामने से निकले और ये मारें, क्योंकि अभी तक इन्होंने शेर नहीं मारा था। हाँका शुरू होने के थोड़ी देर बाद इब्राहीम ने इशारा किया कि सामने झाड़ी में किसी जानवर की आहट मिलती है लेकिन जानवर नज़र नहीं आता; ऐसा मालूम पड़ता है कि जानवर सिन्हा साहब की तरफ को कट रहा है।

हमारा पेड़ ऊँचा था और वहाँ से सिन्हा साहब दिखते थे। उन्होंने बन्दूक जोड़ी तो सही लेकिन फ़ैर मिस्टर डब्ल्यू की तरफ से हुआ। थोड़ी देर तक रुके, लेकिन कोई जानवर नहीं निकला। इतने में मुहीयुद्दीन अपने मचान से उतरकर हमारे पेड़ के पास आये और कहने लगे कि शेर बिलकुल सिन्हा साहब के सामने की तरफ चला आ रहा था, लेकिन फ़ासला कुछ ज़्यादा था। वे यह देख रहे थे कि शेर थोड़े पास और आ जावे तब गोली मारें मगर मिस्टर डब्ल्यू ने बीच ही में फ़ैर मार दिया। शेर घायल तो ज़रूर हो गया, लेकिन गोली ठीक जगह पर नहीं लगी। हम सबने उतरकर वह जगह देखी जहाँ मिस्टर डब्ल्यू ने गोली चलायी थी। वह जगह उनके मचान से करीब १०० गज़ और सिन्हा साहब के मचान से करीब ७० गज़ दूर थी। वहाँ खून का दाग मिला लेकिन बहुत खून नहीं था। शेर बिलकुल सीधा सिन्हा साहब के सामने को चला आ रहा था और अगर मिस्टर डब्ल्यू का फ़ैर न हुआ होता तो करीब ५० गज़ दूर आ जाने पर वे फ़ैर कर देते। उनको बहुत नागवार गुज़रा, लेकिन हमने इशारा किया कि कुछ मत कहो; मिस्टर डब्ल्यू अपने पाहुने हैं।

शेर पर जहाँ तक हो सके २०-२५ गज की दूरी से फ़ैर करना चाहिए और ५० गज से ऊपर तो हरगिज़ नहीं, क्योंकि पास से गोली भरोसे की लगती है और जहाँ मारना

चाहते हैं वहीं लगती हैं। दूर से गोली मारने में अगर बन्दूक ज़रा सी हट गयी तो नाजुक जगह बच जाती है और वह भाग जाता है। हालाँकि जानवर बाद को मर ज़रूर जाता है लेकिन वह शिकारी के हाथ नहीं लगता और उसका चमड़ा भी खराब हो जाता है।

ये शेर पीछे को हटकर एक नाले में बहुत घनी झाड़ी में घुस गया था। उसके क़रीब जाने का कोई उपाय नहीं था। ख़ैर, चारों शिकारी हाथी पर चढ़े और उस झाड़ी की तरफ गये। झाड़ी के भीतर ५० गज़ ही गये थे कि वह हथिनी, जिसका नाम गौहर था, एकदम रुक गयी। उसे शायद शेर की बू मिल गयी थी। उसने अपनी सूँड़ को ऊपर उठाकर ज़मीन पर पटका और ज़ोर से चिल्लायी। ऐसा उसने तीन बार किया और आगे बिलकुल नहीं बढ़ी बल्कि पीछे हटकर भागने लगी। शेर न दिखता ही था और न उसकी कोई आवाज़ ही मिलती थी। हम लोगों ने सोचा कि अगर हथिनी ने शेर को देख लिया तो फ़ौरन भाग खड़ी होगी और जंगल घना होने से कोई दुर्घटना हो जावेगी। महावत भी डरपोंक मालूम पड़ता था, क्योंकि वह हथिनी को आगे ले जाने में डरता था। हम लोगों ने सलाह की कि अब लौट चलो कल सवेरे भैंसे लाकर इस नाले में छोड़ देंगे और उन्हींके पीछे पीछे चलेंगे। हम लोग डेरे को लौट आये मगर आपस में दिल में कुछ मैल हो गया।

इसके दूसरे दिन सवेरे भैंसे लाने के लिए आदमी भेजे। मोतीनाले में भैंसे तो क्या दूध देनेवाले जानवर भी बहुत कम थे। वहाँ से ४-५ मील पर बंजारे लोग अपनी भैंसें वगैरह चराते थे; उनके पास आदमी भेजे। वे दस बजे तक लौटकर आये और बोले कि वे भैंसें लाने को तैयार नहीं हैं। इतने में एक आदमी खबर लेकर आया कि ७ मील दक्षिण की तरफ गारा हुआ है और जानवर ने एक बड़ी गाय मार ली है। हम सबकी सलाह हुई कि यह दूसरा शेर है, चलकर आज इसे मार लें, फिर कल ज़ख़्मी शेर को देख लेंगे। अगर वह बहुत घायल होगा तो नहीं भागेगा और अगर ऐसा न हुआ तो भाग ही गया होगा। लिहाज़ा हम लोग जल-पान करके करीब एक घण्टे बाद हथिनी पर सवार होकर उस तरफ को चल दिये। हम उस जंगल में करीब १२ बजे पहुँचे। हमारे शिकारी और जंगल में रेंजर पहिले ही से वहाँ पहुँच गये थे और उन लोगों ने मचान बँधवा लिये थे। हमने मचान नापसन्द किये, क्योंकि इस ब्लाक मेंसे जो हालौन नदी बहती है उसके उत्तर की तरफ मचान बाँधे गये थे और हाँका उसके दक्षिण के जंगल का होना था, याने नदी बीच में पड़ती थी। जंगल बहुत ही घना था। मचान ऐसी जगह में थे कि अगर शेर नदी में उतरता तो मार खा जाता। लेकिन इस बात का ख़्याल नहीं किया गया था कि अगर शेर पुराना और चालाक है तो खुले मैदान में कभी निकलेगा ही नहीं और तिस पर नदी पारकर इस किनारे पर फिर क्यों आने

चला ? नदी का पाट करीब ५० गज़ का था, मगर ज़्यादा हिस्सा सूखा था और पानी भी घुटने भर था। ऐसी जगह से शेर का निकलना बिलकुल ग़ैर-मुमकिन था।

ख़ैर, वक्त बहुत हो गया था; मचानों को खोलकर नदी के दूसरे तरफ ले जाकर बाँधने में समय भी बहुत लगता और इसी बीच में शेर को आदमियों की आहट मिल जाती। हाँका कि हमारी राय नहीं भी थी तो भी सबकी राय हुई कि हाँक लो, जैसा होगा, देखा जायगा। मचानों पर बैठ गये और हाँका शुरू करने का हुक्म दे दिया। हाँका शुरू हुए १५ मिनट ही हुए थे कि कुछ आवाज़ आयी और उसके बाद दो फ़ैर सुनायी पड़े। फ़ैरों की आवाज़ उस तरफ से आयी जहाँ से कि हाँका शुरू हुआ था।

हम लोगों ने रेंजर को बन्दूक देकर हाथी पर हँकैयों के साथ भेजा था मगर फ़ैर करने को मना कर दिया था। हम लोग अब बड़े पशोपेश में पड़े, लेकिन दस मिनट बाद पेड़ से उतरे और नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ पर एक हँकैये ने कहा कि शेर ने किसी आदमी को पकड़ लिया है। हम सब शिकारी वहाँ इकट्ठे हुए और जिधर बतलाया था, वहाँ गये। वहाँ जाकर देखा कि एक आदमी के कन्धे को शेर ने मुँह में भर लिया था और उसके पंजों के निशान भी आदमी की पीठ पर मौजूद थे। वह आदमी जात का गोंड़ था और बहुत मजबूत था। उससे पूछने पर उसने नीचे लिखा किस्सा

सुनाया। "मैं हाँकता हुआ चला जा रहा था कि र मेरी तरफ देखकर गुर्राया। जब वह नदी के पास पहुँच गया तो गुर्राकर मेरी तरफ लौट पड़ा। मैंने ऐसा देखकर पत्थर उठाकर उसे मारा, लेकिन वह भागा नहीं, बल्कि आकर मुझ ही को पकड़ लिया। मैं ज़ोर से चिल्लाया 'शेर ने पकड़ लिया, शेर ने पकड़ लिया,।' पीछे से बन्दूक के दो फैर हुए और वह मुझे छोड़ कर भाग गया। मैं झट से दौड़कर पास के एक पेड़ पर चढ़ गया। सात-आठ फुट ही चढ़ा था कि शेर के पीछे शेरनी मेरी तरफ दौड़ती हुई आयी। मेरे बड़े ज़ोर से हल्ला करने पर वह मुड़कर चली गयी।"

हम लोग उस आदमी को हाथी पर बैठाकर मोतीनाला चले आये। वहाँ पर हमारे पास पोटेशियम परमैंगेनेट था, उसका गाढ़ा घोल बनाकर अपने हाथ से उसके जख़्मों को अच्छी तरह धोया। हमारे वहाँ पहुँचने पर एक बनिये ने छोटी सी दूकान भी खोल ली थी। उसके पास नया लट्ठे का कपड़ा मिल गया; उसे दो-तीन गज़ लेकर उस आदमी के पट्टियाँ बाँध दीं और अपने ड्राइवर चुन्नीलाल के साथ मोटर में बिछिया के अस्पताल को भेज दिया और एक चिट्ठी भी वहाँ के डाक्टर को लिख दी।

चुन्नीलाल उसे मोटर में बिठाकर रवाना हो गया। शाम के ६½ बजे होंगे जबकि मोटर मोतीनाले से अढ़ाई मील दूर एक नाले में पहुँची। वहाँ मोड़ है; जंगल भी बहुत घना

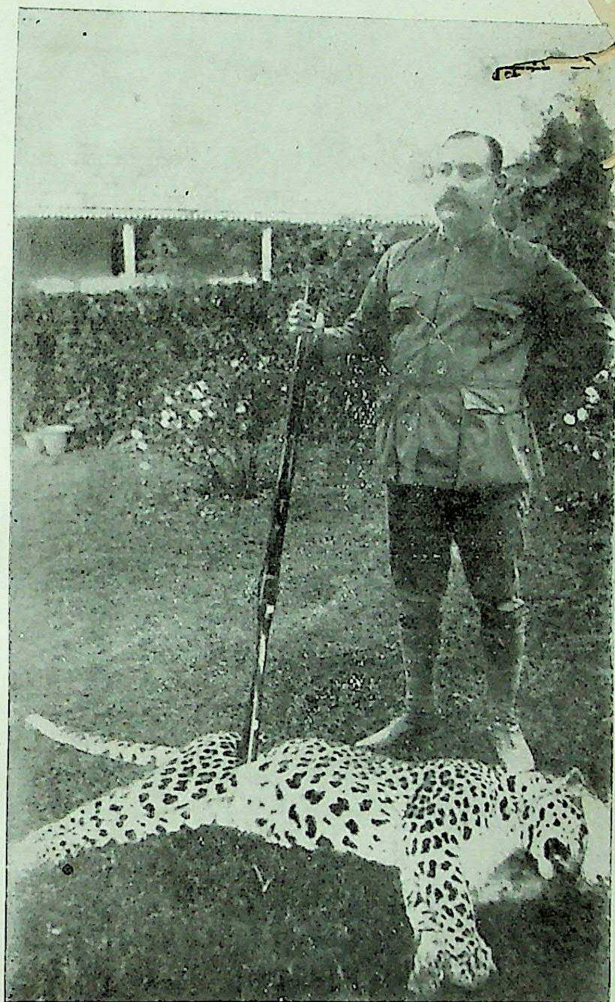
है और शेर की कटन है। वहाँ पर शेर की बहुत ज़ोर की आवाज़ आयी। वह आदमी बहुत घबड़ा गया और मोटर की खिड़की (मोटर बंद थी) मेंसे एकाएक कूद पड़ा और साम्हने के एक पेड़ पर चढ़ गया। चुन्नीलाल ने कोई बीस गज़ जाकर गाड़ी रोक ली और वह उतरकर पेड़ के पास आया। उसे पेड़ से उतारना चाहा मगर वह नहीं उतरा। आख़ीर में चुन्नीलाल मोटर लेकर हमारे पास वापिस गया और यह सब हाल हमसे कहा। हमने दो आदमी और बन्दूक साथ में देकर उसे भेजा। उन लोगों ने आठ बजे रात को बड़ी मुश्किल से उसे उतारा। बिछिया के अस्पताल में उस आदमी को भरती करा दिया और डाक्टर ने उसी वक्त जख़्म धोकर दवाई लगाई। उसके जख़्म इतने गहरे थे कि अँगुली की अँगुली भीतर घुस जाती थी। चुन्नीलाल उन दो आदमियों को उसके पास छोड़कर १२ बजे रात को हमारे पास लौट गया। दूसरे दिन हम लोगों ने कहा कि शेर को तो अब छोड़ देना चाहिए और चलकर उस आदमी को देखें। दिसम्बर की ३१ तारीख हो गयी थी और हमको नागपुर २ तारीख को पहुँचना था। पहिली जनवरी को तो बिछिया में ही ठहरे और उस आदमी के खाने-पीने का इन्तज़ाम कर, उन दो आदमियों को उसके पास रहने को कह दिया। डाक्टर की फीस चुकाकर हम लोग उस दिन शाम को चल दिये। वह आदमी डेढ़ महीने में अच्छा हुआ और तब तक २००) उसके लिए ख़र्च हुआ।

छठवें दिन खबर आयी कि वह शेर जिस पर कि मिस्टर डब्ल्यू ने गोली चलायी थी मर गया और उसी नाले में है। उसका चमड़ा मिला तो सही मगर लक ड़बग्घों ने उसे चींथ डाला था।

इस वाक़्ये को लिखने के दो सबब हैं। एक तो यह कि शिकारी को यह नहीं चाहिए कि, जब जानवर किसी दूसरे शिकारी के साम्हने चला आ रहा है, वह गोली मार दे। ऐसे में मन में मैल पड़ जाता है और शिकारीपन की हैसियत से यह ठीक भी नहीं समझा जाता। अगर ऐसा न हुआ होता तो जानवर दूसरे दिन ढूँढ़कर निकाल लिया होता। दूसरी बात यह कि जब शेर का मचान बाँधा जावे तो इस बात का ध्यान रखा जावे कि शेर को मचान की तरफ बड़ी खुली जगह मेंसे न जाना पड़े, क्योंकि ऐसे में उसके लौट जाने का डर है, जिससे हँकैयों की जान जोखिम में पड़ेगी।

गुलबाघ

१. पहिली फरवरी सन् १९१७ को, जब हम कचहरी में मुकद्दमा कर रहे थे, तब हमारे पास तेवर का एक आदमी आया और कहने लगा, "बाबूजी हमारे गाँव में एक बड़ा गुलबाघ लहटा हुआ है; कल रात को उसने एक बड़ी बकरी मार ली। अगर आपको शिकार करना हो तो चलिए।" हमने अदालत से पेशी बढ़वायी और फौरन घर आकर अब्दुल्ला नाम के शिकारी को जो हमारे यहाँ नौकर था, बुलवाया। दरेस बदलकर हम और वह मोटर में बैठकर चल दिये। जबलपुर से आठ मील पश्चिम में जाने पर मोटर सड़क पर छोड़ दी और हम लोग बायें तरफ को चले और गाँव तेवर पारकर जंगल में घुसे। जंगल भरकों का है और कई नाले एक दूसरे से कटकर बहते हैं। ऊपर से तो बहुत जंगल नज़र नहीं आता लेकिन भरकों में घुसने पर बहुत घनी झाड़ियाँ मिलती हैं; ऊँचे पेड़ बहुत कम हैं। ऐसे ही जंगल में, सड़क से तीन मील दूर जाकर ठहर गये। यहाँ पर एक नाले में लाल रंग की एक बकरी को, गुलबाघ मारकर घसीट ले गया था और उसकी पिछली एक रान खा भी गया था। नाला करीब तीन-चार फुट गहरा था और उसमें कुछ नमी थी और गुलबाघ के पंजे वहाँ लगे थे। पंजे बड़े थे



लेखक अपने शिकार के साथ

पृष्ठ ६२

जिससे यह मालूम पड़ा कि गुलबाघ बड़ा है और वे ऐसे बने थे, जिनसे यह पता चलता था, कि वह बकरी को खाकर नाले में ही चला गया है।

जब हम उस जगह पहुँचे तो करीब ४ बजा था। वहाँ हमको बैठने के लिए कोई पेड़ या जमीन का टीला नहीं दिखा, इसलिए गारे से थोड़ी दूर जमीन पर ही बैठना ठीक किया। यहाँ जमीन ढालू थी, इसलिए कुल्हाड़ी से छीलना पड़ा। सामने आड़ करने के लिए ऊपर की तरफ से झाड़ियाँ काटकर वहाँ लगा दी और देखने के लिए एक झरोखा सा बना लिया था जिससे हम शिकार को देख सकें। शिकारी लोग इसे प्याला कहते हैं। यह जगह गारे से करीब ६ फुट पर थी, लेकिन हमको ज़्यादा से ज़्यादा ५ गज साम्हने तक गोली मारने का मौका था, क्योंकि फिर नाला मुड़ गया था। इस समय तक हमने शेर या गुलबाघ की शिकार नहीं की थी। हमारे पास १६ नम्बर की बन्दूक और ५७७ नम्बर की राइफ़ल थी; राइफ़ल तो हमने अब्दुल्ला को दे दी और बन्दूक अपने पास रखी। हम लोग अपनी जगह पर बैठ गये और चूँकि दोनों रँगरूट ही थे, इसलिए दोनों ने बन्दूकों को साम्हने झाड़ी में दाहिनी तरफ को घुसेड़ दिया, क्योंकि दाहिनी तरफ को गुलबाघ गया था और वहीं से आवेगा भी, ऐसा हमने सोच रखा था।

अब ४॥ बज चुका था। थोड़ी देर में शिकारी (अब्दुल्ला) ने इशारा किया कि बायें तरफ से जानवर

की आवाज़ आ रही है। हम लोग उस तरफ़ क़रीब १५ मिनट तक [illegible]की से देखते रहे, मगर कुछ भी नहीं दिखा और पत्तियों का खड़-खड़ाना भी बंद हो गया। अब हम एक बार दाहिने और एक बार बायें तरफ देखने लगे, लेकिन फिर ख़्याल किया कि गुलबाघ शायद साम्हने से आये। इसलिए सिर तो दाहिनी तरफ ही रहने देकर हमने तिरछी नज़र से एकबार साम्हने देखा और ८ फुट दूर जानवर को खड़ा पाया। हमारे और उसके बीच में सिर्फ गारा ही था। वह बहुत बड़ा था, इसलिए एकाएक हमको शेर का धोखा हो गया, लेकिन फिर हमको ख़्याल आया कि बकरी के गारे पर शेर क्योंकर आयगा। ग़ौर से देखा तो गुलबाघ मालूम हुआ। हम कह नहीं सकते कि वह कबसे हमारी तरफ देख रहा था। हम भी उसे दो मिनट तक देखते रहे, लेकिन हिले-डुले ज़रा भी नहीं। फिर हमने अब्दुल्ला को चिऊँटी ली। इससे वह घबड़ा-सा गया और दाहिनी तरफ को ही ऊपर-नीचे सिर करके देखने लगा। हमने फिर चिऊँटी ली, कि सीधे बैठो। उस समय तक उसने भी गुलबाघ नहीं मारा था। इतने में गुलबाघ ने यह देखकर, कि हम हिले-डुले नहीं, गारे की तरफ नज़र फेंकी। ज्योंही उसने अपना सिर गारे की तरफ किया, त्योंही हमने बड़ी सहूलियत से बन्दूक को झाड़ी के नीचे से निकालकर झरोखे में से करीब एक फुट बाहर निकाल दिया, क्योंकि तब ही वह हमारे कन्धे पर जम सकी। इतने ही में उसे शायद कुछ आवाज़ मिल

गयी और उसने अपना सिर ऊपर उठाया। हमने सोचा कि वह बन्दूक की नली देखते ही छलाँग मारेगा इसलिए हमने सिर पर जोड़कर फैर मार दिया। हमारी बन्दूक में लीथल (Lethal) गोली (फूटनेवाली) भरी थी। गोली लगते ही वह उचटा और पीछे जाकर भद्द से गिरा। वहाँ वह फिर उचटा, लेकिन अब जहाँ वह गिरा, वहाँ बाहर से दिखायी नहीं पड़ता था और न गिरने की आवाज़ ही आयी। वहाँ एक पेड़ तीन-चार वार हिला और फिर काँखने की आवाज (आँह) आयी और फिर कोई आवाज़ नहीं मिली। जो पेड़ हिला था वह छेवले का था और ६-७ फुट ऊँचा था। जब उसका हिलना बन्द हो गया, तब हमने अब्दुल्ला से कहा कि शिकार मार लिया। वह बोला, "चुप रहिए; बिजली है, अभी ही आ जायगा।" हमने मिट्टी का एक ढेला भी उस पेड़ में मारा, लेकिन न तो कोई आवाज़ ही आयी और न पेड़ ही हिला। हमने अब्दुल्ला से कहा, कि अब निकलना चाहिए, लेकिन उसने मना किया।

हम अपने साथ के दो आदमी करीब १०० गज पीछे छोड़ आये थे। वे पेड़ पर बैठे थे। उनसे यह तय कर लिया था, कि जब हम एक-एक मिनट के बाद तीन वक्त सीटी दें, तब वे आ जावेंगे। हमने ऐसा ही किया और वे लोग हमसे करीब १५ गज़ दूर आकर खड़े हो गये। इस समय ५½ बजा था। उन्होंने पूछा कि क्या हुआ? हम बोले

कि, " शिकार मार ली; आ जाओ।" वे बोले कि, "हाँ, हमने भी काँखने की आवाज़ सुनी थी।" हम और अब्दुल्ला भी (झाड़ी मेंसे) निकल आये और उन लोगों से झाड़ी में जानवर ढूँढ़ने को कहा। अब्दुल्ला बाईं तरफ चला गया, जहाँ जानवर न था और जब उसे वहाँ कुछ न दिखा, तब वह चिल्लाया—"क्या हमारी जान ले लोगे?" हमने अब्दुल्ला को उस तरफ जाते हुए नहीं देखा था; हमने आवाज़ सुनकर उससे कहा कि साम्हने को देखो। वहाँ झर-बेरी बहुत घनी थी। हमने साथवालों से उसे काट डालने को कहा। जब झर-बेरी कट गयी, तब वह छेवले का पेड़ पूरा दिखने लगा। हमने देखा कि गुलबाघ की पिछली दोनों टाँगें उछलने में छेवले के पेड़ की दो डालियों में फँस गयी हैं और वह लटक रहा है। उसका सफेद पेटा बड़ा सुन्दर दिखता था। उसे झाड़ पर से मुश्किल से उतारा और घर ले आये। उस रात को हमको मारे खुशी के नींद नहीं आयी, क्योंकि यह पहिला ही कटीला जानवर था जिसे हमने मारा था। जब उसको चीरा, तब गोली का एक टुकड़ा तो सिर में और दूसरा टुकड़ा कलेजे में मिला। गोली के दो टुकड़े और हुए थे जिनमें से एक तो गर्दन मेंसे फूट गया था और एक सिर के पीछे से।

* * *

मई सन् १६२१ के आखीर में हमने अपने शिकारी इब्राहीम और एक दोस्त मिर्ज़ाजी के साथ सब सामान

वग़ैरह कालापानी भेज दिया। इस गाँव को जाने के लिए जबलपुर से ३० मील दूर, कुण्डम के आगे दो मील तक, पक्की सड़क से जाना पड़ता है और वहाँ से कम से कम १६ मील जंगली रास्ते से जाते हैं, तब इस जगह पहुँचते हैं। यह गाँव जबलपुर जिले और रींवा रियासत की हद पर है, सिर्फ़ महानदी नाम की एक नदी बीच में पड़ती है, जिसे पार करने पर रींवा रियासत शुरू हो जाती है। इस जगह पर शेरों की खबर थी, इसलिए चार पड़े भी भिजवा दिये थे।

हमने पहिले १ जून को जाने का निश्चय किया था लेकिन हमारी लड़की के सख़्त बीमार पड़ जाने से ऐसा हो न सका। तीन गारे होने की खबरें भी आयीं, लेकिन १० तारीख तक तो जाना हो ही नहीं सका। आख़ीर में १० तारीख को लड़की का बुखार उतर गया और उसी दिन ६ बजे शाम को रवाना भी हो गये। उस साल गर्मी बड़ी शिद्दत की पड़ी थी और जबलपुर जिले भर में खूब हैजा फैला था इसलिए हमने अपने साथ एक शीशी पोटेशियम परमेंगेनेट और एक शीशी क्लोरोजेन की तथा कुछ कुनैन भी रख ली थी।

रास्ते में २१ मील जाने पर हमको मोटर पर से दो चिनकारे नज़र आये और हमने मोटर रुकवायी। हमारे पास १२ नम्बर की बन्दूक, चार छर्रेदार कारतूस और एक बक-शॉट थे। हमने जमीन की पार की आड़ लेकर उनको ऐसा

जोड़ा कि दोनों एक सीध में आ गये और पासवाले चिनकारे के बंद को जोड़कर फ़ैर कर दिया। पासवाला चिनकारा तो भाग गया, मगर उस पार वाला गिर पड़ा। जब हम पास गये तो हमें ताज्जुब हुआ कि पासवाला चिनकारा तो भाग गया, लेकिन दूरवाला गिर पड़ा। इसलिए हमने सोचा कि हो न हो, पहिलेवाले को भी छर्रा लग गया है। ऐसा सोचकर हम उस तरफ़ को गये, जिधर को वह भागा था और करीब २० गज़ जाने पर उसे मरा पाया। दोनों को उठवाकर मोटर में रख लिया। दोनों के सींग एक से थे और करीब आठ इंच के थे।

तीस मील जाकर मोटर को पेड़ के नीचे छोड़ दिया। इस समय करीब ८ बज चुका था। साथ में दो लालटेनें थीं, जिनको जला लिया और बन्दूकें तथा टिफ़िन केरियर, जिसमें पका हुआ खाना था, लेकर चल दिये। करीब एक फर्लांग चलने पर एक सूखा नाला पड़ा, जिसमें से रास्ता था। करीब ६ मील तक उसी नाले के पथरीले रास्ते पर चले और बाद में झाड़ियों मेंसे चलना पड़ा। रास्ता इतना ख़राब था और लालटेनों का उजियाला इतना कम था, कि कभी-कभी तो हम लोगों के पैर पत्थरों में ठोकर खा जाते थे और कभी-कभी फिसल भी जाते थे। करीब १ बजे रात को एक गाँव के पास पहुँचे, जिसके बाहर एक कुआ था और आम-इमली के बड़े बड़े पेड़ भी लगे थे। हम लोगों ने तय किया, कि रात को

कुए के पास ही लेट रहना चाहिए, सबेरे चलेंगे, क्योंकि रास्ता बहुत खराब है। इसलिए हमने कोटवार को बुलवाया, कि वह कहीं से खाट वग़ैरह का इन्तज़ाम करे, मगर उसने कहा कि गाँव में सख़्त हैजा पड़ा है; कुए में पानी बहुत कम है और वह भी बहुत गँदला। जब हम लोग कुए के पास गये तो दो आदमी वहाँ मरे पाये। यह देखकर हमारे साथी बहुत घबड़ाये; तिसपर प्यास बहुत लगी थी। ख़ैर, वहाँ से चल दिये और २-३ मील जाकर एक टेकड़ी पर पेड़ के नीचे डेरा डाल दिया। यहाँ पर भी गन्दा पानी था इसलिए न तो किसी ने खाना ही खाया और न पानी ही पिया। रात को नींद भी ठीक से नहीं आयी। साढ़े-चार बजे सबेरे सबको उठा दिया और ५ बजे चल दिये। बड़ी मुश्किल से करीब ६ बजे कालापानी पहुँचे। रास्ते में ५-६ बार महानदी को पार करना पड़ा, परन्तु उसमें पानी बहुत कम था। कालापानी में हमने पहिले ही से रोटी पकाने वाला ब्राह्मण भेज दिया था। उसने झट से चा-नाश्ता तैयार कर दिया, जिसे खा-पीकर थोड़ी देर बाद हम लोगों ने महानदी में ख़ूब नहाया, क्योंकि बहुत थक गये थे। यहाँ पर नदी में पानी कुछ अच्छा था।

कालापानी से दो मील दूर एक गाँव है, जहाँ से उसी दिन खबर मिली कि गाय का गारा हुआ है। हमने चार बजे शाम को जाने का ठीक किया, मगर इतने में महाराज ने कहा कि, "बाबू जी यहाँ पर तम्बू में तो हमको रात को डर लगता

है, क्योंकि रोज़ रात को कोई जानवर आकर एक फर्लांग दूर बैठ बैठा इस तरफ को देखता रहता है; उसकी आँखें चमकती हैं।" मुकद्दम ने बताया, कि वह एक बहुत पुराना गुलबाघ है, जिसने गाँव के कुत्ते-बकरी सब खा लिये। उसने यह भी कहा कि कई शिकारियों की बकरियाँ भी वह खा गया, लेकिन हाथ किसी के नहीं आया। जानवर दरअसल बहुत होशियार और चालाक था, जैसा कि आगे चलकर मालूम होगा। हमने छोटे मिर्ज़ा सुभानबेग को एक दूसरे गाँव को बकरी लाने भेज दिया और बड़े मिर्ज़ा हबीबुल्ला बेग के साथ चार बजे उस गाँव को गये जहाँ से गारे की खबर आयी थी। वहाँ जाकर देखा तो गारा करीब ४-५ दिन का था और सड़ भी गया था, जिससे उस पर बैठना फ़िजूल था। इसलिए हमने वहाँ पड़ा बाँधने का इन्तज़ाम कर दिया और कालापानी लौट आये।

कालापानी लौटते समय रास्ते में बड़े ज़ोर से पानी बरसा और हालाँकि बरसा थोड़ी ही देर तक, लेकिन हम लोग खूब भींग गये थे। यह जेठ था पहिला दौंगरा था। डेरे पर आकर देखा कि पानी के सबब से वहाँ बहुत गड़बड़ हुई थी। सोने के लिए तम्बू में सूखी जगह नहीं बची थी। ख़ैर, हमने कपड़े बदले और फूस की एक झोपड़ी साफ़ कराके उसमें खाट लगायी। इतने में मिर्ज़ा सुभानबेग भी बकरी लेकर आ गये। उस दिन तेरस थी, जिससे चाँदनी अच्छी थी।

हम बहुत थक गये थे, इसलिए रात को गारे के लिए नहीं बैठे और बकरी को गाँव में बँधवा दिया। सवेरे देखा तो पड़ों का गारा भी नहीं हुआ था।

हमारे डेरे से करीब १०० गज़ के बाद से ही जंगल शुरू था। करीब ३ बजे के भीतर आधा मील गये और करीब ५० गज़ खुली जगह देखकर ठहर गये। उसके बीच में ८-१० फुट ऊँचा छेवले का एक पेड़ था। उसी पर मचान बँधवाया। वहाँ कुछ पत्थर भी इधर उधर पड़े हुए थे, जिनको अलग करा दिया। इसी खुली जगह मेंसे जंगली रास्ता भी था। यह बतलाने का सबब यह है, कि जितने कटीले जानवर होते हैं, वे रात को काँटों, झाड़ियों मेंसे न जाकर जंगल के रास्ते पर से ही जाते हैं। इसीलिए हमने यहाँ मचान बँधवाया था। उस मैदान में हमारे बायें तरफ कोई ६ फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा घास का एक टुकड़ा था, वहाँ बकरी को बाँध दिया। यहाँ इसलिये बाँधा था कि जब जानवर घास की आड़ लेकर आवेगा तो हमको बैंड़ा मिलेगा। हम और हबीबुल्ला बेग करीब ६ बजे शाम को मचान पर बैठ गये और आदमियों से कह दिया कि करीब ६-१० बजे तक बैठेंगे और फिर जब एक-एक मिनट बाद तीन बार सीटी दें, तब लालटेन लेकर उतारने को चले आना।

वह रात चौदस की थी और चाँदनी बहुत सुहावनी थी, लेकिन थोड़ी देर के बाद ही बदली आ जाने से इतना

अँधेरा हो गया, कि बन्दूक की मक्खी तक नहीं दिखती थी। जिन दिनों का यह ज़िक्र है उन दिनों टार्च-लाइट नहीं निकला था। अब यदि जानवर अँधेरे में आता तो हम क्या करते? इसके लिए हमने अपने पास चूना और थोड़ी सी रुई रख ली थी। चूना मक्खी पर लगाने के लिए था, जिससे अँधेरे में सफ़ेदी दिखने से निशाना लगाया जा सके। लेकिन ऐसा करके कन्धे पर बन्दूक को जोड़ने पर सफ़ेदी बिलकुल भी नज़र नहीं आती थी, इतना अँधेरा हो गया था। अब हम बड़े चक्कर में पड़े, कि करना क्या चाहिए? इतने में हमको एक मित्र की आज़मायी हुई हिकमत याद आयी, जिसे उन्होंने हमें बताया था। सोचा कि शायद यह तरकीब कामयाब हो जावे। वह हिकमत यह थी। बन्दूक की नाल के सिरे से (मुहरे से) दाहिने और बायें दोनों तरफ बाजू में करीब एक-एक इंच तक चूना लगा दिया। अब हम अँधेरे में जानवर को इस चूने के ज़रिये जोड़ सकते थे, क्योंकि बन्दूक को कन्धे पर उठाकर जोड़ने से उसका छोर दिखता है, इसलिए वहाँ चूना रहने पर वह दिखता था, जिससे उसे जोड़ सकते थे। इतना करके हम बैठ रहे।

करीब ८½ बजे मिर्ज़ाजी ने कहा, कि दाहिने तरफ से किसी जानवर के आने की आहट मिलती है। कुछ ही देर में यह आहट मिलना बन्द हो गया। पहिले तो बकरी दाहिनी तरफ को देखती थी, लेकिन फिर वह बाईं तरफ देखने लगी।

इतने में हमने मैदान में दाहिनी तरफ, वकरी से करीव ५० फुट दूर करीव २ फुट लम्बा और १ फुट ऊँचा पत्थर देखा। हमने मन में कहा कि आदमियों से कहा था, कि सब पत्थर फेंक देना; उन्होंने लापरवाही से यह यहाँ पड़ा रहने दिया। हो सकता है, कि जानवर इस रास्ते से आवे तो उसे हम इस पत्थर के वज़ह से जोड़ न सकें। कुछ देर के वाद हमने फिर उस पत्थर की तरफ देखा लेकिन हमको, उसे करीव १० फुट वकरी की तरफ हटा हुआ देखकर, वड़ा ताज्जुब हुआ। हम उसी तरफ ग़ौर करके रह गये। इतने में देखा कि वह पसरकर ज़मीन से चिपट गया और अव ज़मीन से सिर्फ ६ इंच ही ऊँचा रह गया। फिर वह आगे सिमटकर पहिले जैसा हो गया, जैसे कि इल्ली चलती है। अव हमको भरोसा हो गया, कि यह पत्थर नहीं, गुलवाघ ही है। हमको उसका सिर वगैरह तो कुछ दिखता ही नहीं था, लेकिन चूँकि वह वकरी की तरफ को जा रहा था, इसलिए सोचा कि उसी तरफ को उसका सिर भी है। अव हमने मिर्ज़ाजी को चिऊँटी ली, ताकि वे भी होशियार हो जावें। जानवर को जोड़ने की कोशिश की, लेकिन कुछ ज़्यादा कामयावी नहीं हुई। एक वात यह भी थी, कि जव तक जानवर ज़मीन से चिपटा हुआ था, तव तक फैर करना मुनासिव नहीं था। फिर भी हम उसके अगले हिस्से को ही वन्दूक की वाजू से जोड़े रहे। जव वह वकरी से कोई १५ फुट दूर रह गया, तव उसने सिर उठाया। हमने सोचा,

कि अब वह उछलकर बकरी को पकड़ना ही चाहता है। बकरी को उसकी कुछ खबर भी न थी। अब हमने पहिले बन्दूक के छोर से जिस जगह जोड़ा था, उससे बन्दूक के मुहरे को करीब एक इंच नीचे झुका दिया जिससे कि वह जगह मक्खी से ढँक जावे। हमने जोड़ा तो था बाईं नाल को, लेकिन फैर किया दाहिनी नालको, जिससे कि अगर ठीक निशाना भी न लगे तो दाहिनी तरफ किसी भी जगह लग जावे, क्योंकि उसका सारा बदन उसी ओर था। ज्योंही हमने फैर किया त्योंही वह उछला लेकिन फैर लगने से बकरी की तरफ न जाकर सीधा करीब ८ फुट ऊँचा चला गया और फिर भद से गिरा। अब वह भदर-भदर आवाज़ करते हुए मैदान के बाहर झाड़ी में निकल गया और फिर घूमकर हमारे पीछे की तरफ को आया। हमको वह दिखता तो नहीं था, लेकिन मिर्ज़ाजी को ऐसी आहट मिलती थी। वहाँ आकर उसने आँह की आवाज़ तीन बार एक के बाद एक धीरे से की और फिर बिलकुल भी आहट नहीं मिली। मिर्ज़ाजी बोले कि जानवर मर गया, मगर हमने १५ मिनट ठहरकर तीन बार सीटी दी।

करीब १० मिनट के बाद मिर्जा इस्माइल बेग तीन-चार आदमियों के साथ लालटेन लेकर आये और उन्होंने हम लोगों को उतारा। हमने कहा, कि चलो गुलबाघ को ढूँढ़ लेवें। इस पर गाँववाले और छोटे मिर्ज़ा बोले कि सबेरे

दी देखना ठीक होगा, लेकिन बड़े मिर्ज़ा ने कहा कि वह मर गया और पास ही है। हम और बड़े मिर्ज़ा आगे आगे बन्दूक जोड़कर चले; हमारे पीछे लालटेनवाला और फिर दूसरे आदमी थे। दाहिनी तरफ बीस गज़ ही गये होंगे, कि गुलबाघ एक पेड़ के नीचे पड़ा दिखायी दिया। वहीं से उसे पत्थर मारा, लेकिन वह हिला-डुला नहीं। पास जाकर उसकी दुम उठायी। गुलबाघ ७॥ फुट लम्बा था और उसका सिर बड़ा भारी था। वह बहुत पुराना था। उसे नसेनी पर लिटाकर डेरे पर ले आये। बकरी को वहीं बँधा रहने दिया कि अगर गुलबाघ का जोड़ा हो तो शायद गारा करे, मगर सवेरे जाकर देखा कि गारा नहीं हुआ और तब बकरी को खोलकर ले आये।

जब गुलबाघ को चीरा तो पता चला कि हमने जो एल० जी० शॉट मारा था, उसके ६ छर्रों मेंसे उसके पाँच लगे थे—एक सिर में, एक गर्दन में और बंद पर तीन। निशाना बहुत ठीक लगा था और इनमें से किसी भी एक छर्रे के लगने से वह मर जाता। उसके कलेजे के १७ टुकड़े निकले, जिससे यह मालूम हुआ कि जानवर १७ साल का था, क्योंकि ऐसा कहते हैं कि जानवर जितने साल का होगा, उसके कलेजे में उतने ही टुकड़े होंगे।

हम लोग तीन रोज़ और ठहरे, लेकिन कोई गारा नहीं

हुआ। आख़िरी दिन योंही हाँका किया, लेकिन कुछ नहीं निकला इसलिए चले आये।

*　　　*　　　*

सन् १६२५ के मई महीने में हमने सिवनी ज़िले के सकाटा ब्लाक का पर्मिट लिया और उस महीने के आख़िरी हफ्ते में अम्बिका बाबू, सिन्हा साहब, अहमद अली, इब्राहीम और हम सिवनी को मोटर से रवाना हुए। जबलपुर से ११ मील दूर, बरगी के पास, पहुँचने पर हमको रेल की पाँत के उस पार एक चिनकारा दिखा, जो मोटर देखकर रेल की पाँत के किनारे-किनारे साम्हने को भागा। यहाँ पर रेल की सड़क की बराबरी से ही पक्की सड़क भी थी, लेकिन करीब ३०० गज़ आगे रेल की सड़क की कटन थी। हमने चुन्नीलाल से मोटर खूब तेज़ भगाने को कहा। हमने और अहमदअली ने तुरन्त छर्रे की बन्दूकों में बक-शॉट भर लिये। मोटर करीब ५० मील की चाल से दौड़ायी और चिनकारा भी वैसी ही तेज़ी से दौड़ा, क्योंकि हमारे और उसके बीच का अन्तर करीब करीब बराबर रहा। हमारी मोटर कटन पर बायें तरफ को मुड़ी और उसी समय चिनकारा भी सड़क के पास आ पहुँचा। इतने में अहमद अली ने, जो बायें तरफ बैठे थे, मोटर मेंसे ही फैर किया और चिनकारा तीन-चार कुलाटें खाकर गिर पड़ा। उसे छर्रा बन्द पर लगा था। उसे उठाकर मोटर में रख लिया और आगे बढ़े।

थोड़ी दूर जाने पर एक बेर के पेड़ के नीचे ५-६ मोर दिखायी दिये जो मोटर की आवाज़ पाकर भागने लगे। हमने चार नम्बर का छर्रा मारा और दो मोर गिर पड़े; उनको भी साथ में बाँध लिया। हम लोग करीब तीन बजे दिन को सिवनी पहुँचे। वहाँ के फारेस्ट आफीसर ने, जो कि हमारे मुलाकाती थे, अपने बँगलें में ही तम्बू वगैरह लगा रखे थे। हम रात को वहीं ठहरे। शहर से सामान मँगवा लिया और सबेरे उनको साथ लेकर सिवनी से आग्नेय दिशा में गये और ११ बजे २२ मील दूर सरेखा पहुँचे। वहाँ हमने तम्बू पहिले ही भेज दिये थे, लेकिन जाकर खड़े करना पड़े। वहाँ दो दिन तक ठहरकर जंगल मुहकमा की हथनी पर बैठकर जंगल के भीतर १० मील गये। तब कहीं सकाटा पहुँचे। यह हथनी वही थी, जो हमारे साथ मोतीनाले में भी थी। हथनी थी तो डरपोंक पर साथ ही बड़ी समझदार भी थी। जंगल बहुत घना था और वह अपनी सूँड़ से आगे की डालियाँ, बाँसेन आदि तोड़ती जाती थी, जिससे वे सवारियों को लगें नहीं। उस दिन तो हम लोग इन्स्पेक्शन हट (इसमें जंगल की जाँच करनेवाले अफसर ठहरते हैं) में ठहर गये लेकिन दूसरे दिन हमारे तम्बू भी वहाँ पहुँच गये और एक उम्दा आम के बगीचे में डेरा लगाया गया।

सकाटा गाँव बहुत छोटा है और उसमें सिर्फ ८-१० झोपड़ियाँ गोंड़ों ही की हैं। आसपास सागौन का बहुत घना जंगल है, जिसमें ६०-६० फुट, ८०-८० फुट ऊँचे झाड़ हैं।

एक सागौन का पेड़ तो १५० फुट ऊँचा था और उसका घेरा भी १५ फुट से ज़्यादा था। इतना बड़ा सागौन का पेड़ हमने कहीं भी नहीं देखा। यह स्थान देखने में बड़ा ही रमणीय है और ज़्यादातर यहाँ बोदे (Bison) ही रहते हैं। यही पहिला मर्तबा था, कि हमको बोदे मारने का पास मिला था और इसीलिए हम गये भी थे। बोदे के शिकार का हाल हम दूसरे परिच्छेद में देंगे।

दूसरे दिन शाम को हम और इब्राहीम गाँव के दो-तीन गोंड़ों को लेकर जंगल देखने निकले। करीब ३ मील जाने पर एक नाला मिला, जो सूख गया था और जिसमें बोदे के खोज भी मिले, लेकिन वे पुराने थे। नाले में एक मील चलने पर हमको पानी से भरा सिर्फ एक गड्ढा मिला; वह भी एक हाथ चौड़ा और दो हाथ लम्बा। उसके पास गुलबाघ के पैर के निशान थे और चूँकि पाँच बज गया था, इसलिए हमने गुलबाघ के लिए ठहरने का विचार किया। पानी का डबरा नाले की ६ फुट ऊँची कगार के नीचे ही था और उसके पीछे घना जंगल था। नाला भी बहुत चौड़ा न था। उसके दूसरे पार घास का मैदान था। हमने जंगल की तरफ वाली कगार पर एक गड्ढा बना लिया जिसमें हम सब लोग बैठ गये और आसपास आड़ के लिए झाड़ी-पत्ते वगैरह लगा लिये।

हम लोगों को बैठे थोड़ी ही देर हुई थी कि कोई पचास हरियलों का एक झुंड आया और पानी पीकर उड़

गया। फिर एक जोड़ा हरी का काता * का आया और वह भी पानी पीकर चला गया। इसके बाद एक जोड़ा चौखारा मुर्गी का आया और फिर तीन-चार जंगली मुर्गे भी आये। इनके बाद सात मोर पानी की तरफ़ आयें लेकिन वे नाले की दूसरी कगार पर ही थे कि हमारे साथ के एक गोंड़ ने दूर इशारा करके कहा, कि कोई जानवर चला आ रहा है। जानवर घास में था और तिसपर दबककर चल रहा था, इसलिए हम समझे कि बन-बिलाव है और मोरों को पकड़ने को आ रहा है। लेकिन उसके और मोरों के बीच में कुछ खुली जगह पड़ती थी, इसलिए वह घास ही में अपने दाहिने तरफ़ घूम गया और हमसे करीब १०० गज दूर नाले में उतरा। तब हमने देखा कि वह बन-बिलाव नहीं गुलबाघ है। जब वह नाले के बीच में लगे हुए गुँदले में पहुँचा, तब हमने सोचा कि वह नाला पार करके इस किनारे पर आयगा और फिर जंगल ही जंगल हमारे पास आकर मोरों के ऊपर कूदेगा। हमने कहा, कि इससे अच्छा यही होगा, कि उसे गोली नाले में ही मार दी जाय। हमने अपनी एक्सप्लोरा को बंद जोड़कर चलाया और वह चारों कोने चित्त गिर

---

* वह हरे रंग की पड़की (Dove) होती है, जिसके पेटे का रंग संदली होता है। उसकी चोंच सुर्ख़ लाल होती है और माथे पर गोल लाल टीका होता है। दोनों बाज़ुओं पर करन सुए के माफ़िक हरी ज़मीन पर लाल दाग रहते हैं। उसके पैर लाल होते हैं और यह चिड़िया देखने में बहुत ख़ूबसूरत होती है।

पड़ा। सिर्फ उसके पैर हवा में हिलते हुए दिखायी देते थे, बाकी बदन गुँदले में छिप गया था। वह उठा और दो बार ज़ोर की आवाज़ दी, लेकिन दिखता नहीं था, सिर्फ इतना मालूम पड़ता था, जैसे किसी चीज़ को नोंच रहा हो। इसलिए हम दूसरा फ़ैर न कर सके। इतने में उसने एकाएक उचाट मारी और जहाँ से आया था उसी तरफ घास में घुस गया। वह जब भाग रहा था, तब उसकी दुम लकड़ी के माफ़िक हवा में खड़ी थी और उसके भागने का तरीका भी ऐसा था कि उसपर फ़ैर नहीं कर सकते थे। इसका सबब यह था कि वह टेढ़ा-तिरछा भागता था। दूसरी बात यह थी, कि फ़ासला भी ज़्यादा पड़ता था।

जब गुलबाघ ने आवाज़ दी थी तो मोर ऐसे डर गये थे कि एक में एक गर्दन फँसाकर पाँच मिनट तक वैसे ही रह गये। वे ऐसे बेहोश से हो गये थे, कि भाग तक नहीं सकते थे।

थोड़ी देर में अँधेरा छा गया और हमने सोचा कि गुलबाघ को सबेरे ढूँढ़ लेंगे, लेकिन इसलिए बैठे रहे कि शायद कोई दूसरा गुलबाघ आ जावे। क़रीब १२ बजे रात को बड़ी घनी बदली आ गयी और आधा घंटा में पानी भी बरसने लगा और बहुत अँधेरा हो आया। साथ में हम लोग एक लालटेन ले गये थे। उसे जलाकर एक बजे रात को वहाँ से डेरे को चल दिये, लेकिन रास्ते में बहुत फ़ज़ीहत हुए

और भटकते-भटकते चार बजे सवेरे डेरे पर पहुँचे। हम लोग वहाँ से रात को उठते नहीं, लेकिन पानी ज़ोर से आ गया था, जिससे बन्दूक खराब होने का डर था और तब किसी जानवर के आने की भी उम्मीद नहीं थी।

डेरे पर एक घण्टा ही आराम किया और ६½ बजे सवेरे पानी के गड्ढे पर फिर पहुँच गये। फिर जहाँ गुलबाघ को गोली मारी थी, वहाँ देखा तो खूब खून पड़ा था। उसी खून का सरोदा लगाते हुए हम आगे बढ़े। करीब २०० गज़ जाने पर घास ज़्यादा ऊँचा मिला और खून भी काला मिला, जिससे ख़्याल हुआ कि गोली उसे कलेजे के पास लगी है और वह पास ही होगा। हमारे पास तीन बन्दूकें थी, इसलिए तीन तरफ से जाना शुरू किया। हमारे साम्हने मैदान था, कुछ आदमी वहाँ घूमकर गये और घास की तरफ आने लगे। हम घास मेंसे ही आगे बढ़े और ५० फुट जाने पर गुलबाघ को मरा पाया। वह ६½ फुट लम्बा था। हम लोग उसे डेरे पर ले आये और एक पेड़ के नीचे रख दिया।

फ़ारेस्ट-आफीसर भी रात को एक जगह शिकार को गये थे, पर उनको मिला कुछ भी नहीं था। वे सवेरे उसी समय हथनी पर आये, लेकिन वह गुलबाघ को देखते ही चिल्लायी और पीछे को हट गयी। महावत ने उसे आगे बढ़ाना चाहा, लेकिन वह बढ़ी नहीं बल्कि उसने बहुतसा बीट कर दिया।

इस वाक़्ये को लिखने का असली सबब यों है कि जब कभी जानवर को गोली लग जाती है तो वह दुम उठा कर भागता है। गोली चलाने के बाद अगर जानवर भागे और उसकी दुम खड़ी हुई दिखे तो समझना चाहिये, कि उसे लग गयी है।

*　　*　　*

सन् १६२८ के दिसम्बर की छुट्टियों में मौलवी साहब माला ने शिकार खेलने का नेवता भेजा। यह जगह दमोह ज़िले में है। अम्बिका बाबू, हमारे भानजे दामाद मिस्टर सरकार, जो बनारस से आये थे, अब्दुल्ला और इब्राहीम शिकारी, गुलाम मुहम्मद और हम यहाँ से दोपहर को दो बजे मोटर में रवाना हुए। दमोह सड़क पर नौहटा नाम की एक जगह है, उससे दाहिने तरफ १० मील दूर माला है। वहाँ शाम को ५ बजे पहुँच गये।

मौलवी साहब ने हम लोगों को अपने बड़े मकान में ठहराया और बड़ी ख़ातिरदारी की। सवेरे उठकर हाँका करने के लिए आदमी इकट्ठे किये और एक बड़े भारी पहाड़ पर जाकर हाँका कराया, लेकिन दिन भर धूप में खूब मिहनत करने पर भी कुछ नहीं निकला। ऐसा हम लोगों ने दो दिन किया और तीसरे दिन कहा कि नदी के किनारे के भरके हाँकना चाहिए। तीसरे दिन भरके हाँके गये और पहिले ही लग्गे

में एक मोर निकला, जिसे हमने छर्रा मारा और वह गिर पड़ा।

दूसरे लग्गे में पहिले लगान पर चुन्नीलाल १२ नम्बर की बन्दूक लेकर बैठा था और दूसरी जगह इब्राहीम और मिस्टर सरकार को बैठाया। जब हम और अम्बिका बाबू तीसरे लगान पर बैठने जा रहे थे, तब एक गुटरा निकला और बिठलानेवाले ने कहा कि आप लोग यहीं बैठ जाइये। हम लोग वहाँ बैठ गये, लेकिन वह जगह बैठने लायक न थी। उससे आगे एक नाला था जहाँ से जानवरों की कटन थी और असल में इसी नाले के किनारे बैठना चाहिए था। चौथी जगह पर अब्दुल्ला शिकारी जाकर बैठ गया। हम सब लोग ज़मीन पर ही बैठे थे। चुन्नीलाल के साम्हने एक सूखाप थरीला नाला था, जिसमें बड़ी बड़ी चट्टानें थीं। हाँका पश्चिम से पूर्व को चला आ रहा था।

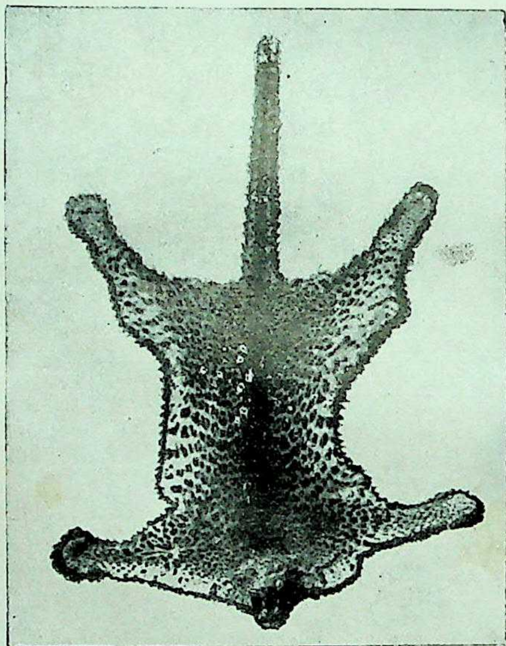
हाँका शुरू होते ही एक बड़ा साम्हर आकर मिस्टर सरकार के साम्हने खड़ा हो गया। उन्होंने उसे गोली मारी और वह गिरते-पड़ते चुन्नीलाल की तरफ बढ़ा। उसी वक्त इब्राहीम ने भी उसे गोली मारी। वह भागा और चुन्नीलाल से ५० गज़ पीछे पश्चिम की ओर जाकर गिर पड़ा। चुन्नीलाल को जानवर, झाड़ियाँ घनी होने से, दिखा नहीं लेकिन आवाज़ मिली और वह उसी तरफ को मुँह करके रह गया। इतने में उसे पटर-पटर की आवाज़ पीछे से सुनायी दी। उसने पीछे

घूमकर देखा कि एक बड़ा भारी जानवर नाले में से नीचा सिर किये मेरी तरफ तेज़ी से भागता चला आ रहा है। पहिले तो उसे शेर का शक हुआ, क्योंकि जानवर दिखता नहीं था, लेकिन उसने झटसे अपनी बन्दूक जोड़ी और देखा कि वह एक बड़ा भारी गुलबाघ है। वह सीधा उसीकी तरफ चला आ रहा था। वह पूर्व से चला आ रहा था और दरअसल हाँके के बाहर था, लेकिन पहिले दो फैर हो चुके थे, जिनकी झाईं उस पहाड़ में मालूम पड़ी जहाँ से वह चला आ रहा था और इसलिए उसे धोखा हुआ कि हाँका उसी पहाड़ का हो रहा था। इसीलिए वह वहाँ से भागकर पश्चिम की तरफ को जाता था। चुन्नीलाल ने करीब २० गज से उसपर बक-शॉट का फैर किया, लेकिन वह अच्छी तरह से बन्दूक जोड़ नहीं पाया था। फैर होते ही गुलबाघ बैठ गया, मगर चुन्नीलाल को वह देख नहीं सका, क्योंकि वह करोंदा की झाड़ी की आड़ में बैठा था। गुलबाघ ने तुरन्त ही उचाट मारी और ५० गज़ दूर एक पेड़ की आड़ में हो गया, जिससे चुन्नीलाल उस पर दूसरा फैर न कर सका।

जहाँ गुलबाघ छिपा था वहाँ से ५० फुट के करीब पर घायल साम्हर पड़ा था जो पैर फट-फटा रहा था और इससे गुलबाघ समझा कि हाँका हो रहा है। चुन्नीलाल ने मन में कहा कि गुलबाघ घायल हो गया है, इसलिए उसे चलकर देखना चाहिए, मगर उसी समय गुलबाघ उठकर भागा और चुन्नीलाल ने उसपर फैर किया, लेकिन गोली जानवर को लगी

नहीं। जानवर हाँके के भीतर था और वह रुका नहीं, बल्कि सीधा दौड़ता हुआ अब्दुल्ला के पास पहुँचा। अब्दुल्ला ने उसें गोली मारी, लेकिन वह थोड़ी नीची हो जाने से एक चट्टान पर लगी। गोली फूटनेवाली थी इसलिए उसका एक टुकड़ा फूटकर जानवर के पेट में घुस गया। इस समय उसने अब्दुल्ला को देखा और आवाज़ करके खिसियाकर उसकी तरफ दौड़ा। अब्दुल्ला भी पीछे को भागा लेकिन अब उसके साम्हने चार फुट ऊँची और १५ फुट लम्बी गोल चट्टान पड़ी, जिस पर वह कूदकर चढ़ गया। वह दूसरी तरफ कूदनेवाला ही था कि उसने गुलवाघ को भी उसी चट्टान पर चढ़ते देखा और उसने कूदने के पहिले उसे बक-शॉट मारा, जो लगा भी। फैर करके वह भागा, पर भागते समय उसके कुरता-धोती बेर की झाड़ी में उलझकर बदन से अलग हो गये और वह नङ्गा हो गया; उसके बदन में भी कई जगह काँटे लग गये और पैर भी मोच खा गया। उसके साम्हने ही महुए का एक बड़ा, टेढ़ा पेड़ था, जिसकी ऊपर की डालियाँ एक दूसरे पेड़ में चली गयी थीं। वह महुए के पेड़ पर से चढ़कर दूसरे पेड़ पर चला गया। गुलवाघ भी बढ़कर बीच चट्टान में पहुँचा और वहाँ से झुककर घूरकर पेड़ की तरफ अब्दुल्ला को देखने लगा, लेकिन वह घनी पत्तियों के बीच में था। वह इतना डर गया था कि भागते समय अपनी बंदूक भी फेंक गया था।

अब हाँका भी पास आ गया था और जानवर कभी अब्दुल्ला की तरफ और कभी हाँके की तरफ देखता था। अब्दुल्ला चिल्लाया, "बाबू साहब दौड़ो, खा डाला, खा डाला।" दरअसल उस समय गुलबाघ इतने गुस्से में था कि किसी भी आदमी को देखने पर बिना मारे न छोड़ता। आवाज़ पाकर हम और अम्बिका बाबू उस तरफ को चले। इतने में माला का शिकारी भी आ पहुँचा। अब हमने तो एक्सप्लोरा रख ली और अम्बिका बाबू को राइफ़ल दे दी और उनसे ठहरने को कहा। हाँकेवालों से भी चुप होने को आवाज़ दी और हम उस आदमी के साथ अब्दुल्ला की तरफ चले। जिस पेड़ पर अब्दुल्ला चढ़ा था उसके नीचे पहुँचकर हमने उससे उतर आने को कहा, मगर उसने मुँह पर अँगुली रखकर चुप रहने का इशारा किया और यह भी इशारा किया कि जानवर पास ही है। वह उस कोहे के पेड़ से उतरकर हमारे पास आया। इतने में हमने देखा, कि अम्बिका बाबू खाली हाथ हमारे पीछे चले आये और बन्दूक माला के शिकारी को दे दी। ऐसा देखकर हमको बहुत गुस्सा आया, कि घायल जानवर है और इनको एक हथियार दिया जिसे इन्होंने दूसरे को दे दिया। खैर, हमने अब्दुल्ला से जानवर बताने को कहा। उसने अँगुली से जानवर की तरफ इशारा किया। इस समय हमारे हाथ में एक्सप्लोरा भरी हुई थी। हमारी नज़र उसपर पड़ी और उसी दम उसने भी हमको देखा। उस वक्त वह ५० फ़ुट पर ही था और दबका हुआ बैठा था।



पृष्ठ ८७

हमको देखते ही उसके दोनों कान पीछे को तन गये, जिससे हम समझे कि अब यह हमारे ऊपर आता ही है। हमने ज़रासी भी देर न करके गोली मारी, जो उसके गर्दन और छाती के जोड़ पर लगी। गोली ऐसे ज़ोर से लगी कि पूरा का पूरा गुलबाघ ८ फुट पीछे हट गया। "मार लिया," कहकर अब्दुल्ला दौड़ा। वह बोला कि जानवर मर गया। हम भी उसके पीछे दौड़े कि शायद जानवर इस पर कूद न पड़े लेकिन वह मर चुका था। गोली का एक टुकड़ा तो गर्दन तोड़कर निकल गया था और दूसरा दिल में पहुँचा था। गोली लगने की जगह तीन इंच का गोल छेद हो गया था।

इसके बाद अब्दुल्ला ने एक आदमी का अँगोछा पहिना और हम लोग गुलबाघ को उठाकर जंगल के बाहिर ले आये। वहीं साम्हर भी मिल गया। अब सबकी राय हुई कि एक लग्गा और हाँक लेना चाहिए। जंगल हाँका गया और इस बार अब्दुल्ला ने एक साम्हर और चुन्नीलाल ने एक बहुत भारी सुअर मारा। इस तरह से उस दिन कुल पाँच जानवर मारे जिनको डेरे पर ले आये।

गुलबाघ को चीरने पर देखा कि चुन्नीलाल का एक बक-शॉट तो पीठ में एक इंच घुसकर रह गया था और अब्दुल्ला की फूट की गोली पेट की अँतड़ी में घुस गयी थी। अब्दुल्ला ने दूसरी बार जो बक-शॉट मारा था उसका एक छर्रा छाती के पास लगा था, जिससे एक पसली टूट तो

गयी थी, लेकिन वह आगे नहीं बढ़ा था। यह गुलबाघ बहुत पुराना और ८ फुट लम्बा था। इसे पहिले कभी गोली लगी थी, क्योंकि इसकी कमर के पास दोनों तरफ गोली के बराबर जगह में चमड़े की पतली झिल्लीं थी। इससे मालूम हुआ कि गोली आर-पार निकल गयी थी और ज़ख्म अच्छा होकर वहाँ नया चमड़ा आ गया था। इस गुलबाघ का चमड़ा बहुत उम्दा और नरम था क्योंकि ठंड के दिनों में शिकार की थी।

माला में पाँच रोज़ और ठहरे और हालाँकि रोज़ ६ बजे सबेरे से ५ बजे शाम तक हाँका किया लेकिन एक भी जानवर नहीं निकला।

*   *   *

सन् १६२६ की गर्मी का ज़िक्र है कि हम, सिन्हा साहब, अब्दुल्ला, इब्राहीम और गुलाम मुहम्मद मोटर से सिहोरा होते हुए बहुरीबन्द पहुँचे। वहाँ के तालाब में हमने ८-१० बदकें मारीं और वहाँ से कच्ची सड़क से दस मील दूर बरही पहुँचे। कटंगी से जो कैमूरा पहाड़ शुरू होता है वह यहाँ तक चला गया है और यहाँ पर समतल जमीन के बराबर हो गया है।

उस साल गर्मी बड़ी शिद्दत की पड़ी थी और अकाल भी पड़ा था। उस गाँव में कुछ भी अनाज नहीं हुआ था। हम लोग मालगुज़ार चौधरी बिहारीलाल के मकान में ठहर गये। पहिले दिन के हाँके में एक साम्हर, एक गुटरा और

एक सेही मारी और सब गोश्त गाँववालों को दे दिया। दूसरे दिन एक साम्हर, एक हिरन और दो सुअर मारे और वे भी गाँववालों में बाँट दिये। इस तरह गाँववालों को करीब ४० मन गोश्त बाँटा, जिससे वे बहुत ख़ुश हो गये।

गाँव के एक आदमी ने बतलाया कि "बरही से पाँच मील दूर इमलहा है। उसके पास पहाड़ है, जिसकी तरी में पानी का एक कुंड है, जिसमें पानी थोड़ा ही बचा है। वह जगह सरकारी जंगल के बिलकुल पास है, लेकिन आबादी में है और उसमें शेर-गुलबाघ पानी पीते हैं।" उस आदमी को लेकर हम और गुलाम मुहम्मद तीन बजे दिन से वहाँ को चले और ४॥ बजे शाम को मुकाम पर पहुँच गये। उस वक्त धूप भी तेज़ थी और लू भी खूब चलती थी। हम लोग पसीने में तर हो गये थे।

पानी के पास कोई पेड़ न था। करीब ५० गज़ पर एक पेड़ था, मगर उसमें शहद की मक्खियों का बड़ा भारी छत्ता लगा था, इसलिए वह पेड़ हमारे बैठने के क़ाबिल न था। पानी की कगार के पास पहाड़ में करीब २५ फुट दूर एक खोह थी जहाँ से कुंड दिखता था। उसी खोह को साफ़ करके उसमें बैठ गये। रात को बहुत गर्मी लगी और हम लोगों ने कोट वगैरह उतार दिये।

रात को १२ बजे पहाड़ के ऊपर से कुछ जानवरों के आने की आवाज़ मिली, लेकिन गुलाम मुहम्मद बोले कि दो

रीछ हैं; वे दिखाई नहीं पड़ते। करीब १ बजे, दूर से किसी जानवर के आने की आहट मिली लेकिन वह पानी तक नहीं आया। उसके बाद साम्हर, भेड़ों वगैरह ने आवाज़ की थी, जिससे गुलाम मुहम्मद ने कहा कि वह गुलबाघ था। सवेरा होते-होते सुअरों की एक हेड़ आयी लेकिन उनपर गोली नहीं चलायी। हम लोग ५ बजे तक वहाँ ठहरे और फिर डेरे को रवाना हो गये रास्ते में एक साम्हर और दो-तीन सम्हरियाँ दिखायी दीं। साम्हर को मार लिया गुलाम मुहम्मद ने उसे हलाल किया और पास के गाँव से आदमी बुलाकर उठवा लाये।

दूसरे दिन यह तय हुआ कि आज सिन्हा साहब और इब्राहीम उसी खोह में रात को बैठें, क्योंकि हम लोग रात भर जागे थे। ये लोग दो बजे दिन से उस कुंड को चले। मिस्टर सिन्हा के पास हमारीवाली ३५५ बोर की राइफ़ल और इब्राहीम के पास १२ नम्बर की बन्दूक थी। करीब डेढ़ घंटे में ये लोग वहाँ पहुँच गये और उसी खोह में बैठे। करीब ५ बजे शाम को बड़ी पूँछवाला एक मोर पानी पर आया लेकिन उस पर फैर नहीं किया। करीब ११ बजे रात को कोई जानवर आकर पानी पीने लगा। सिन्हा साहब ने इब्राहीम को अपना टार्च दे दिया और उससे जानवर पर उजेला फेंकने को कहा। उसने उजेला किया, लेकिन जानवर पर पड़ नहीं सका, इससे बुझा दिया। सिन्हा साहब ने

इब्राहीम के हाथ से टार्च छीन लिया और पत्थर पर राइफ़ल रखकर बायें हाथ से उजेला फेंककर दाहिने हाथ से फ़ैर किया। उस समय जानवर बहुत प्यासा था और घुटने भर पानी में घुसकर पानी पी रहा था। इन्होंने जल्दी-जल्दी में फ़ैर किया था, जिससे गोली हटकर ऊँची लगी मगर जानवर भद्द से पानी में गिर पड़ा। वह उठा और फिर आवाज़ देकर गिरा। सिन्हा साहब ने उसपर फिर उजेला फेंकना चाहा लेकिन इब्राहीम ने मना करके कहा कि जानवर बड़ा है और उसे गोली ठीक जगह लगी नहीं है, जिससे उजेला होते ही वह हम पर चढ़ आयगा।

रात को गोली की आवाज़ हमारे डेरे तक सुनायी दी थी। गोली मारने के थोड़ी देर बाद बदली आ गयी और जानवर रात भर गिरता-पड़ता रहा जिससे इन लोगों को मालूम हो गया कि उसकी कमर टूट गयी है और वह कहीं जा नहीं सकता। ख़ैर, ये लोग रात भर उसी खोह में सिकुड़े बैठे रहे और सवेरा होते ही मिस्टर सिन्हा ने उसकी दोनों आखों के बीच में गोली मारी जिससे वह मर गया। हमको यह दूसरा फ़ैर सुनायी नहीं पड़ा।

ये लोग जब डेरे पर ८ बजे सुबह तक नहीं आये तब हम लोगों को फिकर हुई, मगर इतने में ये आते हुए दिखे और इनके पीछे-पीछे चार आदमी गुलबाघ लादे आ रहे थे। यह गुलबाघ बहुत बड़ा और पुराना था। इसकी लम्बाई ८

फ़ुट ३ इंच थी। यही पहिला गुलबाघ था, जिसे सिन्हा साहब ने मारा था। हमने मारे खुशी के वह राइफ़ल उनको इनाम में दे दी।

*　　*　　*

तारीख ३१ मार्च सन् १९३९ को रामनवमी होने से कचहरी बन्द थी। उस दिन हम खाना खाकर दोपहर को फ़ुर्सत में बैठे थे कि गुलामनबी बरेला से साइकिल पर आया और उसने कहा कि शेर का गारा हुआ है और मैं मचान बँधवा आया हूँ; आप चलिए। हमने पूछा कि गारा कहाँ हुआ है? तब उसने जवाब दिया कि "बरेला से एक मील आगे मंडला सड़क के दाहिनी तरफ एक मील जाने पर रिछाई गाँव पड़ता है। उस गाँव से आधा मील दूर नागा पहाड़ की तरी के पास मालगुज़ारी ज़मीन में गारा हुआ है। एक बड़ा भारी बैल कल ५ बजे शाम को शेर ने मारा है। मुझे सबेरे खबर मिली और मैंने जाकर गारा देखा। वहाँ जानवर के पंजों के बड़े बड़े निशान हैं। यह सब अच्छी तरह से देखकर मचान बँधवाकर यहाँ आया हूँ।" हमने कहा, "अच्छा तैयार होते हैं।"

इतना कहकर हमने माली को चुन्नीलाल को बुलाने के लिए उसके घर भेजा, ताकि वह आकर मोटर तैयार करे, लेकिन उस दिन चुन्नीलाल नहीं आ सका। तब हमने भैरों को बुलवाया।

भैरों ने आकर गाड़ी तैयार की और पेट्रोल भराकर हम लोग २॥। बजे यहाँ से चल दिये और करीब ३। बजे बरेला पहुँचे। वहाँ से दो आदमी साथ लेकर रिछाई को रवाना हुए। बरेला से एक मील आगे चलकर पक्की सड़क छोड़कर रिछाई के कच्चे रास्ते पर से चले। रास्ता बहुत ख़राब था; उसमें पत्थर के बोल्डर थे। करीब दो फर्लांग जाने पर बड़ी-बड़ी चट्टानें मिलीं और एक नाला भी मिला जहाँ से बड़ी मुश्किल से उस नाले को पार किया। उस समय धूप भी बड़ी तेज़ थी! ख़ैर, धीरे-धीरे रिछाई पहुँचे और वहाँ पर मोटर छोड़कर गारे की जगह को चले। रास्ता बड़ा पथरीला था। गाँव से एक फर्लांग पर एक नाला मिला जिसमें पानी के कई डबरे थे। गारे के करीब पहुँचे तो वहाँ दो गोंड़ एक पेड़ के नीचे बैठे मिले।

इन गोंड़ों ने करौंदा की झाड़ी काटकर गारे को ढाँक दिया था, ताकि कोई जानवर उसे खराब न करे। वे लोग जिस पेड़ के नीचे बैठे थे वह महुए का था और गारे से करीब २० फुट दूर था। पेड़ बहुत बड़ा नहीं था लेकिन उसमें डालियाँ बहुत थीं और करीब १० फुट ऊँचे पर एक अच्छा मचान बाँधा गया था। गारे के आसपास चारों तरफ जानवर के पंजे का दाग अंडाकृति में मिला। शेर के पंजे का दाग गोलाकृति में होता है और मादा के पंजे का दाग अंडाकृति में। इस तरह हम पंजे का निशान देखकर पहिचान लेते हैं

क्कि जानवर नर शेर है, या मादा। इसमें सिर्फ एक ही वक्त फ़र्क पड़ता है, याने बड़े गुलबाघ के पैर का निशान भी अंडाकृति में होता है। यह सब सोचकर हमने गुलामनबी से कहा कि या तो यह बाघन है, या बड़ा गुलबाघ। गारा जो किया गया था वह बड़ा भारी बैल था और इतना बड़ा गारा शेर ही करता है, गुलबाघ नहीं। वह गारे को १०० फुट घसीटकर लाया था, मगर उसकी गर्दन की हड्डी नहीं तोड़ी थी, बल्कि उसे नटई पकड़कर मारा था। जहाँ तक हमारा तज़ुर्बा है, वहाँ तक हमको मालूम है कि शेर तो गर्दन पकड़कर जानवरों को मारता है लेकिन गुलबाघ नटई पकड़कर मारता है। इससे हमको धोखा होता था कि गुलबाघ ने गारा किया है। मगर चूँकि बैल बहुत बड़ा था इससे हमको बाघन का भी ख़्याल होता था।

हम और गुलामनबी करीब ४ बजे मचान पर बैठ गये और उन गोंड़ों को गाँव भेज दिया। उनसे कह दिया कि जब हम एक एक मिनट बाद तीन सीटी दें तो उतारने को चले आना। पर जाने के पहिले उनसे गारे पर रखी हुई झाड़ियों को हटाकर ऐसा रखवा दिया जिससे वे कटी हुई न दिखें। हमारे आसपास का दृश्य बहुत ही सुहावना था। ऐसी अच्छी जगह पर हम कभी गारे पर नहीं बैठे। हमारे साम्हने १०० गज़ पर से नागा पहाड़ शुरू था और पीछे बिलकुल मैदान था। दाहिनी तरफ को गारा पड़ा था

और उसके पासही एक नाला था जिसके दोनों तरफ पेड़ थे। उस जगह से थोड़े आगे एक दूसरा नाला उसमें मिला था। उसके साम्हने करीब १०० गज़ पर एक और नाला था। इन नालों की बीच की ज़मीन में मैदान था। पहाड़ पर घना जंगल था जिसमें घुसना बहुत मुश्किल है। जहाँसे पहाड़ शुरू होता है वहाँ तक मालगुज़ारी ज़मीन है और पहाड़ का वह हिस्सा, जो हमारे साम्हने था, बंजर में था और दाहिने तरफ कुछ हटकर आबादी का जंगल शुरू था। ये दोनों जंगल नागा पहाड़ के ही थे। हमारे पीछे १ मील पर बरेला के बड़े २ मकान और मन्दिर साफ दिखाई देते थे।

मचान पर बैठे बैठे ६॥ बज गये लेकिन किसी तरफ कोई आहट नहीं मिली। बदली भी हो आयी। इतने में दाहिनी तरफ एक गुटरा दो बार बोला। तब हमने गुलामनबी से कहा कि जानवर आ रहा है होशियार हो जाओ। उस समय वह बाईं तरफ देख रहा था और हमारा मुँह दाहिनी तरफ को था। मचान पर दाहिनी तरफ वह और बाईं तरफ हम थे। थोड़ी ही देर में झुलपुट हो गयी और दाहिनी तरफ की झाड़ी के बाहर हमको जानवर दिखाई पड़ा। हमने गुलामनबी को इशारा किया। पहिले तो हम समझे कि शेरनी आ रही है, लेकिन बाद में देखा कि वह एक भारी गुलबाघ है। हमने बन्दूक के घोड़े चढ़ा लिये और उसे आने दिया। थोड़ी ही देर में उसने हमारे दाहिनी तरफ

नाले को पार किया। इस समय वह बेंड़ा पड़ता था और हम उसे मार सकते थे, लेकिन बीच में गुलाभनबी पड़ता था। इसलिए हमने उसे आने दिया जिससे वह गारे पर ही आ जावे। वह बिलकुल सीधा गारे की तरफ को चला आ रहा था; किसी तरफ को नहीं देखता था और ऐसा मालूम पड़ता था कि कोई चीज़ रख गया है उसे उठाने आ रहा है। जब वह गारे से करीब ६ फुट पर पहुँचा तो वह महुए के झाड़ की एक डाल की आड़ में आ गया। यह डाल हमारे और गुलामनबी के बीच में पड़ती थी। वहाँ पहुँचकर वह आहिस्ते-आहिस्ते आगे बढ़ने लगा। हमने बन्दूक उस डाल की बगल से जोड़ी कि वह आगे बढ़े और हम फैर करें। अब उसने अपना सिर आगे बढ़ाया। हमने लबलबी पर हाथ लगाया और इरादा किया कि जानवर थोड़ा ही आगे और बढ़े तो हम बंद जोड़कर फैर करें कि इतने में गुलामनबी ने उसपर फैर कर दिया। जानवर एकदम पीछे को उचटा और हाऊँ की आवाज़ करके गिर पड़ा और लौटकर नाले में चला गया। इस तरह से जानवर उस डाल की आड़ में ही रह गया और हम फैर न कर सके।

गुलामनबी हमारे साथ कई बार मचान पर बैठा था, लेकिन उसने कभी उस वक्त तक फैर नहीं किया था इसलिए हमको बिलकुल भी ख़याल नहीं था कि वह फैर करेगा। थोड़ी ही देर में जानवर नाले मेंसे उठा और साम्हने के जंगल में

चला गया। वह हमको फिर दिखा नहीं। अब बिलकुल अँधियारा हो गया। पाँच मिनट और मचान पर बैठे और फिर सीटी दी। तब उन गोंड़ों ने आकर सीढ़ी लगायी और हम उतर आये।

हमारे पास टार्च अच्छा नहीं था इसलिए घर लौट चलना ही मुनासिब समझा और कहा कि कल सबेरे घर से आकर जानवर को देखेंगे। गाँव पर आकर मोटर को चालू किया तो बत्ती नहीं जली। हमारे छोटे टार्च से उजेला दिखाते-दिखाते धीरे-धीरे बरेला तक मोटर लाये। फिर वहाँ से दो लालटेनें लेकर जलायीं और उनको मोटर के साम्हने बाँधकर धीरे-धीरे घर आये। उस समय ६ बज चुका था।

दूसरे दिन हम बड़े सबेरे उठे। रात को नींद बिलकुल नहीं आयी और सिर में भी दर्द रहा। चाय पीकर सात बजे सबेरे सिन्हा साहब की छोटी मोटर में बरेला को रवाना हुए। भैरों ने ही मोटर चलायी। करीब साढ़े सात बजे बरेला पहुँच गये। पहिले दिन गुलामनबी अपनी साइकिल हमारे यहाँ छोड़ आया था; हम उसे मोटर के पीछे बाँध ले गये थे। साइकिल बरेला में गुलामनबी के घर छोड़ दी और उसे भी साथ लेकर रिछाई गये।

रिछाई में हमारे साथ ५०-६० आदमी हो गये और सब मचान की तरफ को चले। जहाँ गुलबाघ गिरा था वहाँ

खून का कोई निशान नहीं मिला। मचान के साम्हने के बंजर में घुसकर देखा तो न कोई जानवर मिला और न खून का निशान ही मिला। तब हमने सोचा कि जानवर निकल गया। फिर मालगुजारी जंगल में हम और गुलामनबी पहाड़ के ऊपर तक चढ़े; कुछ दूसरे आदमी भी साथ में थे, लेकिन गुलबाघ का पता नहीं मिला। जब हम उतरकर आने लगे तब एक आदमी ने आवाज़ दी कि यहाँ पर खून है। वहाँ जाकर दो पत्तों पर बहुतसा खून देखा जो दो किस्म का था। कुछ हिस्से में तो ऐसा खून था जो ८-१० घंटे पुराना था और सूख गया था और किसी चीज़ से पुँछ भी गया था। बाकी खून ऐसा था जो मालूम होता था कि अभी ही गिरा हो।

हमने उन पत्तों को हाथ में उठा लिया और लोगों से कहा कि "जानवर रात को यहाँ पड़ा रहा है और जो खून सूख गया है वह रात का है। वह अभी हम लोगों की आहट पाकर चला गया और तब यह ताज़ा खून गिरा। उसे पीठ में गोली लगी है इसलिए रास्ते में कहीं भी खून नहीं मिला। जानवर इस जगह लेटा था, तब ही खून गिरा।" खून में कुछ फसूकर भी था, जिसे देखकर हमने कहा कि गोली उसके फेफड़े में फूट गयी है। हम लोगों ने विचार किया कि नीचे जाकर गाँव से ढोर मँगवाना चाहिए। उनको आगे करके पहाड़ पर चढ़े। जहाँ गुलबाघ

होगा वहाँ वे विचकेंगे और फिर हम उसे गोली से मार लेंगे।

नीचे जाकर गाँव से करीब ३० ढोर मँगाये और उनको आगे करके पहाड़ पर चढ़ना शुरू किया। पहाड़ बिलकुल सीधा है और पूरी चढ़ाई १½ मील की है। इस समय १२ बज चुका था और धूप तेज़ थी, इससे जंगल के भीतर जाने में तकलीफ़ हुई। साथ में तीस-चालीस आदमी भी थे। पहाड़ के एक तरफ से हम चढ़े थे और दूसरी तरफ कुछ दूर पर गुलामनबी था। पहाड़ के ऊपर समतल जमीन है। वहाँ एक झाड़ी में गुलबाघ पड़ा था। गायें उसके बाजू से ही गयीं, लेकिन न उनको उसकी बू मिली और न वे छड़कीं। गुलबाघ उनको आते देखकर थोड़ा हटकर बायें तरफ एक पत्थर की आड़ में बैठ गया। जिस तरफ से गुलामनबी चढ़ रहा था उसी तरफ उससे आगे एक लड़का पहाड़ पर चढ़ गया था। ज्योंही लड़का मैदान में बढ़ा, त्योंही उसने गुलबाघ को और गुलबाघ ने लड़के को देखा। लड़के को देखकर गुलबाघ आगे को भाग गया लेकिन वह थोड़ी ही दूर जाकर गिर पड़ता था जिससे मालूम होता है कि वह बहुत कमज़ोर हो गया था। इसीलिए उसने लड़के पर या ढोरों पर हमला नहीं किया। गुलबाघ को देखते ही लड़का चिल्लाया और गुलामनबी के पास भाग गया। गुलामनबी ने आगे जाकर देखा तो

गुलबाघ वहाँ नहीं था। झाड़ियों में खूब ढूँढ़ा और गायों को उस तरफ ले गये जहाँ को जानवर भाग गया था, मगर उसका कुछ पता नहीं लगा। दो बजे हम लोग नीचे उतरे और गाँववालों से कह आये कि कल फिर ढूँढ़ने का इन्तज़ाम करना। दूसरे दिन उन लोगों ने बहुत ढूँढ़ा लेकिन वह मिला नहीं। मालूम पड़ता है कि वह आगे जाकर कहीं मर गया।

रीछ

सन् १९१७ की ईस्टर की छुट्टियों में रीछ की शिकार खेलने का तय ठहरा। इसलिए हमारी पुरानी रोवर मोटरगाड़ी में हम, अब्दुल्ला शिकारी और गुलाम मुहम्मद जबलपुर से चले। पहिले सिहोरा पहुँचे और वहाँ से १२ मील दूर बहुरीबन्द गये। बहुरीबन्द से १२ मील दूर सलैया है, वहाँ पहुँचे और सलैया से ६ मील आगे बाकल पहुँचकर उस गाँव में मोटर छोड़ दी। बाकल से चार मील पैदल चलकर झाझागाँव में पहुँचे और वहाँ के मालगुजारी मकान में ठहर गये।

झाझा गाँव में एक तालाब है जो बहुत मशहूर शिकारगाह है। हमने तालाब के बाजू में एक गड्ढा खुदवाया और उसके चारों तरफ बेरी की झाकड़ें डाल दीं। रात को हम लोग उसी गड्ढे में बैठे। रात भर बैठे मगर रीछ नहीं आया। ऐसा तीन रात किया मगर किसी भी रात को रीछ नहीं आया। दूसरे जानवर याने साम्हर वगैरह ज़रूर पानी पीने को तालाब पर आये लेकिन हमने उन पर फैर नहीं किया, क्योंकि रीछ ही की शिकार को गये थे।

यह गाँव बहुत ऊँचाई पर है और जहाँ हम ठहरे थे वहाँ से दो मील दूर पहाड़ की कतिया है, जो मैदान से कम से

कम १,००० फुट ऊँची है। पहाड़ बिलकुल खड़ा है और आदमी बहुत मुश्किल से नीचे उतर सकता है, मगर रीछ बड़ी सफाई से उस रास्ते पर उतर-चढ़ सकता है। मैदान में महुए का जंगल है, जहाँ रीछ पहाड़ की कतिया उतरकर महुआ खाने को रात को जाते हैं। हमने कहा कि चार बजे सबेरे जाकर कतिया की किनार पर बैठें और रीछ उस समय महुआ खाकर पहाड़ को लौटते हुए मिलेंगे। तब उनको मार लेंगे। हमने ३५५ बोर की माऊज़र (Mowser) राइफ़ल खरीदी थी और उसे भी आज़माना था। लिहाज़ा हम लोग चौथे दिन ४ बजे सबेरे कतियों को रवाना हुए और वहाँ पाँच बजे पहुँच गये। इस जगह आधा घंटा ठहर भी गये थे ताकि कुछ उजियाला हो जावे। उजियाला होने पर कतियों के आगे बढ़ना शुरू किया। एक जगह ठहरकर देखा तो ऐसा मालूम पड़ा कि नीचे मैदान में पहाड़ की जड़ से कोई ४०० गज दूर महुए के पेड़ की डाल झुकाकर कोई चीज़ महुआ तोड़ती है। उसके आसपास ज़्यादा पेड़ होने से जानवर साफ मालूम नहीं पड़ता था। हम लोग कतिया पर उसी जगह ठहर गये और उस तरफ को देखने लगे। थोड़ी देर में जब वह जानवर पेड़ों की आड़ से अलग हुआ तो मालूम हुआ कि वह एक भारी रीछ है। इस समय वह हमारे पहाड़ की तरफ को रवाना हुआ और थोड़ी सी देर में १०० गज़ आगे आ गया। तब वह दूसरी तरफ को जाने

लगा और हमने कहा कि अब शिकार हाथ से निकला जाता है इसलिए यहाँ से ही उसे गोली मारनी चाहिए।

हम पहाड़ पर जहाँ खड़े थे वहीं बैठ गये और अच्छी तरह से निशाना लिया। इस राइफ़ल में बाल घोड़ा भी था, उसे भी चढ़ा लिया। जिस जगह रीछ चल रहा था वहाँ तिरछा पड़ता था, याने निशाने के लिए ठीक नहीं था। ख़ैर हमने फैर किया और गोली जानवर की पिछली दाहिनी रान में लगी और सारे बदन को फोड़ती हुई आगे के बायें पैर से निकल गयी। गोली लगते ही जानवर दो-तीन कुलाटें खा गया और उसके पीठ पर दो बच्चे थे वे गिर पड़े, याने जानवर मादा थी। रीछनी ने फिर से बच्चे अपनी पीठ पर चढ़ाये और लँगड़ाती हुई आगे जाने लगी। वह थोड़ी ही दूर गयी थी कि हमने दूसरा फैर किया जो उसे लगा नहीं, बल्कि गोली उसके अगले दोनों पैरों के बीच में पड़ी। गोली जमीन पर लगते ही उसने पिछले दोनों पैरों पर खड़े होकर अपने अगले दोनों पैरों से, उड़नेवाली धूल को पकड़ा और बड़ी डरावनी आवाज़ दी।

जितने जानवर हैं, उनमें से रीछ के माफिक डरावनी आवाज़ किसी की नहीं होती। कुत्ता दो किस्म की आवाज़ करता है, एक तो भोंकता है, दूसरे गुर्राता है। शेर और गुलबाघ भी आवाज़ देते और गुर्राते हैं। रीछ में एक निराली बात है। उसका आवाज़ देना और गर्राना दोनों

एक साथ होते हैं, जिसका असर ऐसा डरावना होता है कि बड़े से बड़ा जानवर भी उसका साम्हना नहीं कर सकता। हमने पढ़ा है कि अच्छा शिकारी हाथी जो घायल शेर का मुक़ाबिला करने से पीछे नहीं हटता, उसपर अगर रीछ आवाज़ करके हमला करे तो वह फ़ौरन भाग जायगा, कभी मुक़ाबिला नहीं करेगा।

दो फ़ैर हो जाने के बाद हमने देखा तो राइफ़ल की और गोली नहीं थी। जितनी गोलियाँ साथ में लाये थे वे खीसा फटा होने से रास्ते में कहीं गिर गयीं। हमारे पास बारह नम्बर की एक बन्दूक भी थी, मगर वह उतनी दूर मार नहीं कर सकती थी। ख़ैर, हमने निशाना लेकर फ़ैर किया तो गोली कतिया की जड़ में ही गिरती हुई दिखायी दी। जो लोग हमारे साथ थे उनको बड़ा ताज्जुब हुआ कि हमारी राइफ़ल ने १,००० फुट नीचे और ३०० गज़ आगे ऐसी सच्ची मार की कि रीछनी इतनी बेकाम हो गयी कि अच्छी तरह से चल नहीं सकती थी। बारह नम्बर की बन्दूक की गोली की आवाज़ से रीछनी गिर पड़ी। जहाँ पर वह गिरी थी उसके पास ही दो पत्थरों के बीच में इतनी छोटी सी खोह थी कि ख़्याल ही न था कि रीछ उसमें घुस सकता है। वह शायद सेही-वेही का घर रहा होगा। रीछनी ने उस खोह में सिर डाला जो अटक गया लेकिन थोड़ी देर कोशिश करने पर वह उसमें घुस गयी। उसके बच्चे जो ऊपर से

हमको बिल्ली के बराबर दिखते थे, दूसरे पहाड़ में इधर-उधर भटकने चिल्लाने लगे।

उस कतिया से मैदान में जाने का रास्ता तीन मील दूर से था और रीछनी तक पहुँचने के लिए कमसे कम दो घंटे लगते और इतनी देर में जानवर कहीं दूसरी जगह भी भाग जा सकता था। हमने अपने साथियों से कहा कि कोई कतिया पर से ही धीरे-धीरे किनार पकड़कर लटककर उतरे तो बहुत ठीक हो। हम खुद तो नहीं उतर सकते थे। बड़ा जोखिम का मुकाम था। खैर, हमारे दो साथी, गुलाममुहम्मद और छन्नू उतरने को तैयार हुए। हमने उनको बारह नम्बर की बन्दूक और कारतूस दे दिये और कहा कि जहाँ तक हो, रीछनी के बच्चों को जिन्दा ही पकड़ना। वे दोनों पहाड़ पर से लटककर उतरे। मैदान में जाकर उन्होंने देखा कि बड़ा बच्चा एक दूसरे पहाड़ पर करीब १०० गज़ चढ़ गया है। गुलाम मुहम्मद उसके पीछे पहाड़ पर चढ़े। यह पहाड़ भी बहुत खड़ा था। जब वे बच्चे से करीब ६ फुट रह गये तब उसने पिछले पैरों पर खड़े होकर ज़ोर की आवाज़ दी, जिससे गुलाम मुहम्मद चौंक पड़े। चौंककर वे दो कदम पीछे हट गये मगर एक पत्थर, जिस पर इनका पैर पड़ा, लुढ़क गया और साथ में ये भी लुढ़क गये और करीब ५० गज़ तक नहीं रुक सके; इतना खड़ा पहाड़ था। हाथ, पैर, सिर वगैरह में खूब चोट लग गयी। हमने ऊपर से चिल्लाकर कहा कि अपना कोट

उतारकर बच्चे पर फेंक दो और फिर पकड़ लो। वे बोले कि आपको वहाँ से छोटा सा दिखता है, मगर है कुत्ते के बराबर। तब हमने कहा कि अच्छा जाने दो, गोली मत मारो। बच्चे पहाड़ में और ऊपर चढ़ गये और अपने चुर में गये।

उन लोगों ने रीछनीवाली खोह के मुँह पर पत्ते वगैरह जमाकर आग जलायी लेकिन वह बाहिर नहीं निकली; भीतर ही चिल्लाती रही। ये लोग फिर तीन मील का चक्कर देकर पहाड़ पर चढ़े। दूसरे दिन देखा तो रीछनी बाहिर मरी पड़ी थी। वह शायद प्यासी होने से रातको बाहिर निकली थी, मगर बहुत कमज़ोर हो जाने से मर गयी।

* * *

रीछ देखने में बड़ा भद्दा जानवर होता है लेकिन होता बड़ा फुर्तीला है। वह ताकत में शेर अथवा गुलबाघ से कम नहीं होता और हमला करने के लिए उसके नाखून और दाँत काफ़ी ख़तरनाक होते हैं। जब यह जानवर आदमी पर चोट करता है तब पिछले पैरों पर खड़ा होकर अगले पैरों से सिर व मुँह पर हमला करता है। वह अकसर आँखें निकाल लेता है और चेहरे का माँस नोंच लेता है, जिससे कि घायल अगर अच्छा हो भी जाय तो उसका चेहरा बहुत बदसूरत व डरावना हो जाता है। हमने कुछ ऐसे आदमियों को देखा है। एक आदमी की एक आँख रीछ ने निकाल ली थी और

दाहिने तरफ के गाल का सब मांस नोंच लिया था जिससे उसके दाँत बाहिर को निकल आये थे।

हिन्दुस्थान में तीन किस्म के रीछ मिलते हैं। पहिले किस्म का तो वह है जिसको नचानेवाले लेकर निकलते हैं। इसका मुहरा सफ़ेद होता है और छाती पर भी सफ़ेद चाँद होता है। इसका चमड़ा रूखा और कड़ा होता है और बाल भी बड़े-बड़े मगर कड़े होते हैं। दूसरे क़िस्म का रीछ हिमालय पहाड़ के जंगल में मिलता है और काला रीछ कहलाता है। वह एक रंग काला होता है। वह वहाँ के सिवाय और कहीं भी नहीं होता। यह देखने में पहिले किस्म के रीछ से बहुत बड़ा होता है और बहुत ताकतवर और गुस्सेबाज़ भी होता है। इसके बाल लम्बे, लेकिन फ़र (fur) याने रुँए के माफ़िक नरम होते हैं, जैसे कि बीवर का फ़र होता है। तीसरी जात का रीछ भूरा होता है, जिसे लाल रीछ भी कहते हैं। यह सबसे छोटा होता है और काश्मीर में मिलता है। इसका भी रुँआ नरम होता है और यह ज़्यादा ठंडी जगह में रहता है।

* * *

सन् १९२३ की बड़े दिन की छुट्टियों में हम और बिछियावाले फ़ैज़ुल्लाखाँ रीछ की शिकार के लिए रेल से सलैया गये और वहाँ से ३ मील पर डेरा डाला वहाँ के गाँव के (local) शिकारी और दो गोंड़ों को लेकर हम लोग रीछों के जंगल में दिन भर घूमे

मगर कुछ भी नहीं मिला। जंगल में फिरते रहने से थक गये थे इसलिए हम लोग एक जगह एक बड़ी चट्टान पर बैठ गये। वहाँ एक पेड़ की छाया पड़ रही थी। पेड़ चट्टान के बगल से ही ऊगा था। थोड़ी देर बैठने पर "गुड़, गुड़, गुड़" की आवाज़ सुनायी दी, जैसे कोई आदमी हुक्का पीता है। हमने साथ के शिकारी से पूछा कि "यह काहे की आवाज़ है?" तब उसने उसी पत्थर पर कान देकर थोड़ी देर तक चुप रह-कर सुना और फिर कहा कि "यहाँ रीछ की खोह है और इसके अन्दर रीछ अभी मौजूद है। वह अपना हाथ मुँह में रखकर गदेली चूसता है और तभी ऐसी आवाज़ आती है।" हमको पहिले तो उसके कहने पर भरोसा नहीं हुआ, लेकिन फिर हमने उतरकर चट्टान का चक्कर लगाया। उस वक्त हमने देखा कि एक तरफ को एक गुफा थी और वहाँ रेत पड़ी थी जिसपर रीछ के गुफा में घुसने के निशान थे। तब हमको यक़ीन हो गया कि इसमें वाक़य रीछ है।

हमने उस गुफा में घुसने का तय किया। वह शिकारी बोला कि "इसके भीतर बड़ा भारी घर-सा होगा।" ख़ैर, हमने अपनी बारह नम्बर की बन्दूक में दो ठोस गोलियाँ भर लीं, क्योंकि रीछ के कड़े चमड़े को फूट की गोली पार नहीं कर सकती; वह तो बालों में ही फूट जाती है। गुफा के भीतर जाने का रास्ता नीचा था, इससे हम उसमें झुककर गये। जूते हमने बाहर ही खोल दिये थे, जिससे किसी किस्म की आहट न हो। करीब दस फुट तक तो हम सीधे

ही गये। फिर दाहिने तरफ लौटना पड़ा। तीन-चार फुट के बाद फिर रास्ता बायें तरफ घूमा और वहाँ से चौड़ा भी हुआ। भीतर करीब २० फुट लम्बा और इतना ही चौड़ा खोह था और उसके दूसरे तरफ छत की ओर बहुत थोड़ा सा उजियाला भीतर आता था। उजियाले के पास ही बैठकर रीछ हाथ चूस रहा था। पहिले तो हमको उसकी आँखें भर चमकती हुई दिखीं। उसका बदन काला था और वहाँ अन्धियारा भी था। सिर्फ ऐसा मालूम पड़ता था जैसे किसी चीज़ का ढेर सा रखा हो। करीब तीन-चार मिनट तक भीतर चुपचाप खड़े रहने पर कुछ-कुछ दिखने लगा।

गुफा में रीछ तिरछा बैठा था, याने उसका मुँह ठीक से हमारी तरफ को नहीं था। उसका बाजू हमारी तरफ को पड़ता था। जब हमको थोड़ा-थोड़ा दिखायी पड़ने लगा तब हमने उसके बाजू के बीचोंबीच जोड़कर फैर किया और एक दम पीछे को भागे। भागते समय हमारी बन्दूक के कुन्दे और पत्थर के बीच में हमारी छिंगुली दब गयी, क्योंकि रास्ता ज़्यादा चौड़ा न था और वहाँ मुड़ना पड़ा, इस सबब उसमें बहुत झन्नाटा हो गया, मगर हम ज़रा भी न रुककर एकदम बाहिर भाग आये और ज्योंही बाहिर निकले त्योंही कूदकर गुफा के मुँह के दाहिनी तरफ हो गये। करीब आधा मिनट बाद रीछ भी बड़े ज़ोर से चिल्लाता हुआ, गुस्से में बाहिर निकला। वह दो फुट ही आगे बढ़ा था कि हमने उसे गोली मारी और वह दो-तीन कुलाटें खाकर गिर पड़ा, मगर हम बन्दूक में

गोली भरना भूल गये। ज्योंही रीछ गिरा, त्योंही हम सब उसके पास पहुँच गये। तुरन्त ही रीछ उठा और उसने आवाज़ दी। सब आदमी इधर उधर भाग गये। हमने उसकी तरफ बन्दूक उठाकर फैर किया, मगर उसमें गोली ही नहीं थी। रीछ हमारी तरफ को झपटा और हम भागे। दस-बारह कदम जाकर हम एक तरफ को कूद गये और रीछ आठ-दस फुट आगे झोंके में निकल गया। इतने में हमने झट से बन्दूक में दो ठोस गोलियाँ भर लीं। वहाँ पहुँचकर वह रुका और फिर लौटने लगा। हमने उसकी गर्दन जोड़कर गोली मारी और वह वहीं गिर पड़ा।

उस दिन हम बहुत बच गये। जब हमने उसे अच्छी तरह देखा तो मालूम हुआ कि तीनों गोलियाँ बराबर लगी थीं। पहिले दो गोलियों से दिल बहुत ही थोड़ा बच गया था। यह रीछ बहुत पुराना था और इसके दो दाँत भी गिर गये थे। इस रीछ का पिछला एक पैर टेढ़ा था, मगर चमड़ा बहुत अच्छा निकला जिसे हमारे पास तेरह साल हो गये।

रीछ के शिकार में एक बात का ख़्याल रहे कि इसके बाल बहुत लम्बे करीब एक फुट होते हैं। पीठ के बाल तो गिर जाते हैं इससे वहाँ पर दो अंगुल ही ऊँचे रहते हैं। पेट के बाल सीधे नीचे को लटके रहते हैं। इससे रीछ देखने में बहुत मोटा और गोल दिखता है लेकिन होता वह चपटा है। अगर उसके बीचोंबीच गोली मारी जावे तो लम्बे बालों की

जड़ में लगेगी। उसके वदन पर उसका कोई असर नहीं होगा। इसी सबब से भागते हुए रीछ के गोली बहुत कम लगती है। इसको गोली मारने की तरकीब यह है कि इसके मुँह से आँखों तक जो सफ़ेदी रहती है उसकी सीध ली जावे। ऐसा करके अगर गोली मारी जावेगी, तबही उसे लगेगी। रीछ को फूट की गोली भी कभी न मारनी चाहिए; जब मारे तब ठोस गोली।

फ़ैज़ुल्लाखाँ साहब हमारे साथ कई मर्तबा शिकार खेलने गये थे। वे इस साल गुज़र गये। इन सरीखे निशानेबाज़ हमने बहुत कम देखे हैं। इनका निशाना इतना सच्चा था कि ये सूत में कोयला बाँधकर टाँग देते थे और राइफ़ल से सूत को काट देते थे। हमने खुद इनको राइफ़ल से गौरैया चिड़िया की कंठी को काटते देखा है। ये उड़ती हुई बदक को भी शर्तिया राइफ़ल से मार लेते थे।

जंगली कुत्ता

सन् १९१९ के मई महीने में हमने ककरतला ब्लाक का पर्मिट लिया जो पूरे मई महीने का था। उस साल गर्मी बहुत सख़्त पड़ी थी। हम ११ तारीख के पहिले शिकार के लिए रवाना न हो सके, क्योंकि हमारे यहाँ बड़ी लड़की की शादी ९ मई की थी। १० तारीख को विदाकर हम ११ मई को दोनों मित्रों के साथ शिकार खेलने ताँगे पर गधेड़ी गाँव तक गये। यह गाँव मिर्ज़ाजी का ही है और ककरतला ब्लाक से लगा हुआ है। गधेड़ी में ताँगा छोड़कर पैदल ही ककरतला गये। रास्ता बहुत पथरीला व खराब था। करीब ३ मील चलने पर ककरतला जंगल की सरकारी चौकी मिली, जिसमें हम लोग ठहर गये। इस गाँव में सिर्फ़ अहीर और गोंड़ रहते हैं जिनके पास गायें हैं। इस गाँव में एक छोटा सा तालाब भी है।

१२ मई को सुबह हाँके का इन्तज़ाम कर निकल पड़े और हाँकते-हाँकते ६ मील दूर उमरिया के जंगल तक करीब १ बजे दोपहर को पहुँचे। हमारे पास का पानी बिलकुल ख़तम हो गया था और प्यास बहुत लगी थी। पहाड़ पर चढ़ते-उतरते हम लोग बहुत थक गये। साथ के हाँकनेवालों को भी ज़ोर की प्यास लगी थी। उस दिन इतनी तेज़ गर्मी थी कि जबलपुर में छाया में थर्मामीटर ११५° डिग्री था।

आसपास कहीं भी पानी का पता न था। रास्ते में भी कहीं पानी नहीं मिला। उस जगह से एक मील दूर आमाखोह के जंगल में एक छोटा-सा कुआ है। वहाँ हम सब लोग गये। सब लोगों ने पानी पिया और १ घंटा आराम किया। वहाँ से लौटने पर फिर हाँका शुरू किया।

अभी तक हमको एक भी जानवर नहीं दिखा था। शेर जो गारा कर चुका था वह भी नहीं दिखा। लौटते वक्त जिस जंगल को हाँका, उसमें पहिले ही वार में जंगली कुत्ते निकले। एक दौड़ते हुए कुत्ते को हमने बक-शॉट मारा मगर वह मरा नहीं, बल्कि जख़्मी हो गया। वह लँगड़ाता हुआ दूर भाग गया और वहाँ एक अजब किस्म की आवाज़ करने लगा जिससे उसके पास बहुतसे जंगली कुत्ते जमा हो गये। हम लोग उसी आवाज़ के पीछे गये और वहाँ जाकर दो कुत्तों को मारा, मगर घायल कुत्ते को छोड़ दिया। वह फिर भागा और उसने फिर वैसी ही आवाज़ की। वहाँ फिर सब कुत्ते मिल गये। हमने फिर दो कुत्ते मारे। वह फिर भागा और तीसरी बार आवाज़ की। तब हमने उस कुत्ते को और एक दूसरे को मारा। इस तरह शाम के ६ बजे तक कुल ६ कुत्ते मारे। शेर का कोई पता नहीं लगा। इस जंगल में बहुत चीतल, साम्हर वगैरह रहते हैं, मगर उस वक्त कोई नहीं दिखा, सबके सब जंगली कुत्तों के मारे भाग गये थे। उस वक्त जंगली कुत्तों पर इनाम थी और हमको ६०) इनाम के मिले थे।

जंगली कुत्ता खैरे रंग का होता है। उसके दोनों कानों की नोकें काले रंग की होती हैं और वहाँ बड़े बाल होते हैं। दुम की नोक भी काली और बड़े बालवाली होती है। अच्छा बड़ा नर जिस वक्त खड़ा रहता है, कंधे तक २४ से २६ इंच तक ऊँचा रहता है। हिरन, साम्हर, चीतल वगैरह सरीखे, हमला न करनेवाले जंगली जानवरों के लिए तो यह काल है। यह अकेला कभी शिकार नहीं करता, बल्कि झुंड के झुंड जानवर पर टूटते हैं। यह जिस जंगल में पहुँच जाता है उसमें हिरन, चीतल वगैरह रहते ही नहीं। कुछ को तो जंगली कुत्ते मार डालते हैं और कुछ भाग जाते हैं। शेर, गुलबाघ भी उस जंगल को छोड़ देते हैं। हमारी समझ में शेर, गुलबाघ जो जंगल छोड़ देते हैं वह इनके डर से नहीं, बल्कि इसलिए कि वहाँ उनके खाने की चीज़ ही नहीं बचती। गुलबाघ को जंगली कुत्ते तंग भी करते हैं।

अगर साम्हर जंगली कुत्तों के रास्ते में पड़ जाय तो वे उसका पीछा करते हैं। जब वह थक जाता है और कहीं उसे पानी मिल गया तो वह इतने गहरे पानी में चला जाता है कि वहाँ कुत्ते ठहर ही नहीं सकते। अगर कुत्ते तैरकर उसके पास तक पहुँचते भी हैं तो वह बहुतसों को टाप और सींगों की मार से मार डालता है।

एक वक्त हमको साम्हर और कुत्तों की लड़ाई के बाद का दृश्य देखने को मिला था। जब हम उस जगह पर

पहुँचे तो साम्हर को मरा पाया। उसका कुछ हिस्सा भी कुत्तों ने खा लिया था, मगर साथ ही १२ कुत्ते वहाँ मरे पड़े थे, जिनको साम्हर ने मारा था। कुत्ते झुंड के झुंड उस पर टूटते हैं। कुछ तो साम्हने से कान वगैरह पकड़कर नोंचते हैं और कुछ पीछे से अंडकोष पकड़कर चीर डालते हैं। हमको जंगल में एकवार और एक जंगली कुत्ता दिखा था मगर उसे मार नहीं पाये। शिकारी को चाहिए कि जव वह जंगल में इनको देखे तो बिना मारे न छोड़े, क्योंकि इनके रहने से जंगल वरबाद हो जाता है। एक दफ़ा हमने तीन बच्चे भी पाले थे मगर वे जी नहीं सके।

———

जंगली सुअर

जंगली सुअर बहुत मज़बूत और तीखे मिज़ाज़ का होता है। यह बड़ा अड़ियल भी होता है। इसका शिकार बन्दूक से करने में तो कोई खूबी नहीं, मगर घोड़े पर बैठकर भाले से जो शिकार किया जाता है, वह सब शिकारों का राजा है। जंगली सुअर ही पहिला चौपाया था, जिसका शिकार हमने किया था।

सन् १९०९ की बड़े दिनों की छुट्टियों में हम अपने साथियों के साथ पनागर से ३ मील दूर तिंदनी गाँव को गये और वहाँ डेरा डाला। यह गाँव जबलपुर से करीब १३ मील दूर पड़ता है। इंतज़ाम कर दिन को हाँका किया गया। सब शिकारी जमीन पर ही अलग-अलग लग्गे पर बैठे थे। हाँके शुरू होने पर ५०-६० सुअरों का एक झुंड हमारे साथियों के पास से, जो कि हमसे दूर बैठे थे, निकला। वे लोग इनको देखते ही बन्दूकें छोड़कर पेड़ों पर चढ़ गये। हमारी तरफ सुअर का एक जोड़ा आ रहा था, मगर वह लौटकर बायें को चला गया। थोड़ी देर में फिर लौटकर सुअर दूसरी तरफ जाने लगे। हमसे उस समय वे करीब १०० गज़ दूर थे। हमने १२ नम्बर की बन्दूक में लीथल गोली भरकर चलायी। गोली एक सुअर के दाहिने पुट्ठे में लगी और सारे बदन को

फोड़ती हुई साम्हने निकली और उसकी बायीं टाँग में जाकर लगी जो टूट गयी और सुअर चार-पाँच कुलाटें खाकर गिर पड़ा। चूँकि यह पहिला ही चौपाया था जिसे हमने मारा था हमको बड़ी खुशी हुई।

सन् १९०८ में हम अपने साथियों के साथ ईस्टर की छुट्टी में मझगवाँ गये। यह गाँव परियट नदी के उस पार है और जबलपुर से १२-१३ मील दूर है। इस गाँव को जाने के लिए परियट नदी को उस जगह पार करना पड़ता है जहाँ वह संगमर्मर की चट्टानों मेंसे बहती है। रात को हम लोग मालगुज़ारी मकान में ठहर गये। दूसरे दिन हाँका किया। हम लोग पाँच शिकारी थे, मगर किसीके साम्हने कोई जानवर नहीं निकला। करीब चार बजे शाम को बब्बा साहब ने, जो हम सबमें बड़े थे, अपनी पाँच सौ बोर की दुनाली राइफ़ल गुस्से में आकर मिस्टर ए को दे दी और यह कहकर चले आये कि अभी तक कुछ नहीं मिला, हम नहीं ठहरते।

हम लोगों ने कहा कि एक पहाड़ी को और हाँक लिया जावे और जो कुछ भी निकलेगा उसे मारेंगे। हम सोचते थे कि शायद मोर वगैरह निकलेगा, इसलिए दो नम्बर का छर्रा अपनी १२ नम्बर की बन्दूक में भर लिया। मिस्टर बी के पास १२ नम्बर की बन्दूक और मिस्टर डी के पास ५०० बोर की एक नली की राइफ़ल थी। हमारे दाहिनी तरफ मिस्टर ए थे। जब हाँका करीब आ गया तब मिस्टर ए का

फैर हुआ और एक सुअर बड़ी तेज़ी से दौड़ता हुआ हमारे चार हाथ दूर से निकला। हमने उसे दो नम्बर का छर्रा मारा। उसने हमको देखा नहीं मगर गिरते-पड़ते निकल गया।

हम सुअर के पीछे-पीछे खोज देखते हुए गये तो खून मिला। तब हमने सब साथियों को बुला लिया और खून के पीछे-पीछे गये। करीब एक मील तक खून और अँतड़ी के टुकड़े मिले। हमारी बन्दूक में जो दूसरा छर्रा था उसको निकाल लिया मगर गोली भरना भूल गये। हम खाली बन्दूक लिए चले जा रहे थे। एक मील जाकर करौंदे की घनी झाड़ियाँ मिली मगर चूँकि पेड़ ऊँचे थे इसलिए नीचे से दो फुट तक सब दिखता था। हमने वहाँ से झाँककर देखा तो करीब १०० गज़ पर एक पेड़ के नीचे सुअर पड़ा था। हमने अपने साथियों से कहा कि सुअर वह पड़ा है। साथी लोग पास आकर पूछने लगे—"कहाँ, कहाँ?" तब हमने अपनी अँगुली से बताया कि वह है। जब हम इस तरह से साथियों को सुअर की ओर अँगुली करके बता रहे थे तब वह धीरे-धीरे उठा। उसने घूमकर चक्कर लगाये और फिर हम लोगों की तरफ पहिले धीरे-धीरे, फिर खूब तेज़ी से आया। उसकी आँखें लाल-लाल और बदन खून से भरा था। जब वह करीब २५ गज़ पर आ गया तब हमने साथियों से कहा कि हम मारे देते हैं। इतना कहकर हमने बन्दूक का बीच खोला और एक

गोली भरी लेकिन हमारी नज़र बराबर सुअर की तरफ़ थी। निशाना लेकर हमने घोड़ा दबाया तो वह खट से बोला और फ़ैर नहीं हुआ। इस वक्त वह हमसे करीब २० फुट दूर रह गया था। हमको अब बन्दूक भरने का मौका नहीं था। हमने फ़ौरन लौटकर साथियों से कहा कि भाई भागो, हमारी बन्दूक नहीं चली। पर हमको वहाँ कोई नहीं दिखा; सबके सब न जाने कहाँ चल दिये थे।

हमारा मुँह जिधर को था हम उसी तरफ को भागे। पीछे से सुअर ने भी धावा किया। हमारे साम्हने कोई पाँच हाथ चौड़ी नाट थी, जिसके दोनों तरफ करौंदा और झरबेरी की झाड़ियाँ थीं। हम ५० गज तो तेज़ी से दौड़ गये, मगर वहाँ हमने ज़रा-सा सिर पीछेकर सुअर की तरफ देखा तो वह हमसे ४-५ फुट दूर रह गया था। साम्हने देखा तो करीब २० फुट दूर करौंदा की झाड़ी आजाने से रास्ता बन्द था। इससे हमको ख़्याल हुआ कि वह वहाँ पहुँचने पर ज़रूर मार लेगा। हम फौरन उचटकर बगल की तरफ कूदे और झरबेरी में गिरे। जिस वक्त हम कूदे उसी वक्त सुअर ने भी मारा, मगर हम बाल-बाल बच गये और वह सीधा चला गया।

जहाँ हम कूदे थे वहाँ ज़रा भी हिल-डुल नहीं सकते थे, खड़े ही झरबेरी के पेड़ में चले गये थे। वहाँ हमने बन्दूक का ब्रीच खोला तो पता चला कि बायीं नाल में गोली भर हमने दाहिना घोड़ा दबाया था। हमने फ़ौरन ब्रीच को बन्द

कर लिया। इस समय सुअर हमसे करीब ८-१० फुट आगे निकल गया था। हमने उसकी गर्दन जोड़कर फ़ैर किया और वह ज़ोर से चीख मारकर गिर पड़ा। जब वह मर गया तब हमने आवाज़ दी कि, "भाई सुअर मर गया, आ जावो।" यह सुनकर हमारे साथी और वह आदमी जो हमको शिकार खेलने को ले गया था न मालूम कहाँ से वहाँ आ गये। हाँकेवालों ने झरबेरी को काटकर हमको निकाला। बाहर निकलने पर मिस्टर ए ने हमसे कहा कि सुअर ने तो आपको मार दिया। हमने देखा तो बायें पैर में एड़ी से जाँघ तक कपड़ों में एकदम काला खून लगा था; पट्टी और हॉफ़-पैंट सब खून से भर गये थे। हमने उनसे कहा कि ज्योंही हम कूदे, त्योंही उसने हमको मारा लेकिन हमको लगा नहीं, सिर्फ़ उसके बदन का रगड़ा लगा जिससे यह खून लग गया।

* * *

सन् १९१३ में हमने हड़गड़ ब्लॉक का, जो सिहोरा से ३ मील पूर्व को है, पर्मिट लिया और चार-पाँच शिकारियों के साथ वहाँ गये। हाँके का इन्तज़ाम कर हम लोग एक पहाड़ी पर बैठ गये। बीच में पहाड़ी की चोटी पर हम बैठे। हमारे पीछे बाँसभेड़ा था, और उसीसे हम टिक गये। सब लोग जमीन ही पर करीब १००-१०० गज़ के अन्तर से वे बैठे थे।

हम लोगों का ख़्याल था कि इसमें चीतल हैं। हाँका जब करीब ५० गज़ पर आ गया तब हमने देखा कि एक

मोर हमारी तरफ चला आ रहा था। वह मोर उम्दा बड़ी पूँछवाला था। हमारी बन्दूक की दोनों नलियों में फूट की गोली भरी थी। हम सोच रहे थे कि गोली निकालकर, मोर को मारने के लिए छर्रा भरें और इसीलिए ब्रीच खोला भी, लेकिन इतने ही में वह उड़कर एक पेड़ पर जा बैठा। हमने चट से ब्रीच बंद कर लिया, क्योंकि हमको शक हुआ कि कोई जानवर इसके पीछे है, तभी यह पेड़ पर जा बैठा। हमने अपनी बन्दूक के दोनों घोड़े भी चढ़ा लिये।

इतने में हमने साम्हने देखा तो करीब २० फुट दूर खड़ा-खड़ा एक बहुत तगड़ा जंगली सुअर हमारी तरफ देख रहा था। हमारे पीछे बाँसेन होने से हम भाग भी नहीं सकते थे। हमने उसे जोड़ तो लिया मगर फैर नहीं किया। हमने यह ठीक समझा कि अगर यह हम पर हमला करेगा तभी इस पर फैर करेंगे। एकाएक सुअर ने अपना मुँह दाहिने तरफ को फेरा और घुड़दौड़ के घोड़े के समान तेज़ी से करीब ८० गज़ दौड़कर एक झाड़ी के दूसरे तरफ जाकर खड़ा हो गया। चूँकि हम उसे देखते ही रहे थे इसलिए झाड़ी मेंसे भी उसका वदन झिलक मारता था। अब वह एक दूसरे शिकारी के पास पहुँच गया था, लेकिन थोड़ी सी देर सोचने के बाद हमने झाड़ी के भीतर से उस पर फैर किया। फैर होते ही वह बड़ी तेज़ी से दौड़कर हाँके के बाहर हो गया।

फ़ैर करने के बाद जब हमने साम्हने को मुँह किया तो ठीक पहिले सुअर की जगह, उससे कुछ छोटा सुअर खड़ा पाया। यह भी हमारी तरफ़ ही देख रहा था। हमने धीरे से बन्दूक उठाकर उसे जोड़ा मगर फ़ैर नहीं किया। फिर हमने सोचा कि शायद यह हम पर हमला करे। हमने इतना सोचा ही था कि एक हाँकेवाले ने, जिसे जानवर नहीं दिखता था, एक पत्थर फेंका जो उससे ५-६ फुट पर गिरा। पत्थर गिरते ही सुअर ने उस तरफ़ को देखा और हमने बंद जोड़कर गोली चलायी। वह आवाज़ देकर गिर पड़ा और ज़रा भी हिला-डुला नहीं। गोली उसके दिल मेंसे पार हो गयी थी। इतने में हाँकेवाले और सब साथी भी आ गये। सब बहुत ख़ुश हुए कि पहिले ही लग्गे में ऐसा बड़ा शिकार हाथ लगा।

उन लोगों ने पूछा कि पहिला फ़ैर काहे पर किया था। हम बोले कि "जहाँ मिस्टर डी थे उनके पासही एक झाड़ी में एक सुअर पर, जो इससे भी बड़ा था, फ़ैर किया था, मगर वह निकल गया।" मिस्टर डी बोले कि, "हमने फ़ैर की अवाज़ सुनी मगर जब गोली चलायी गयी तब जानवर को नहीं। देखा फ़ैर होते ही हमने उसे घुड़दौड़ के घोड़े के माफ़िक दौड़ते हुए देखा जिससे हमको पक्का भरोसा है कि गोली उसे लगी ही नहीं।" हमने कहा कि "जहाँ वह खड़ा था वहाँ चलकर तो देखना चाहिए।" वे हँसने लगे और हमारे साथ जाने को तैयार नहीं हुए। इब्राहीम

शिकारी ने कहा कि हम आपके साथ चलते हैं। उसे साथ ले हम झाड़ी के पास गये और जहाँ से सुअर भागा था, वहाँ पैरों के झटके के निशान मिले। जिस तरफ सुअर भागा था उस तरफ चार-पाँच हाथ पर खून मिला। इब्राहीम बोला कि सुअर का पता लगाना चाहिए, क्योंकि उसे गोली लग गयी है। हम लोगों ने अपनी अपनी बन्दूक भर ली और खून के पीछे हो लिये। करीब १०-१२ कदम जाने पर ज़्यादा खून, और फिर लगातार खून की धार मिली। कोई ५० गज़ जाने पर काला-काला, गाढ़ा खून मिला, जिसे देखकर इब्राहीम ने कहा कि यह कलेजे का खून है और जानवर यहीं-कहीं होगा, इससे होशियारी से चलना चाहिए। हम लोगों ने घोड़े चढ़ा लिये और आगे बढ़े। दस गज़ ही गये होंगे कि सुअर चारों कोने चित्त पड़ा मिला। उसे गोली बंद से तीन-चार अंगुल नीचे लगी थी, लेकिन बदन के आर-पार निकल गयी थी। यह सुअर बहुत बड़ा था और इसके उठाने में चार आदमी लगे।

इस वाक़ये को लिखने की गर्ज़ ये है कि हम जिस जगह बैठे थे वह बिलकुल ठीक नहीं थी। बाँसभेड़ा पीठ पर रखकर कभी न बैठना चाहिए, क्योंकि ऐसी हालत में न तो हिल-डुल ही सकते हैं और न भागते ही बनता है। सुअर हमारे इतने पास था कि अगर हमारी गोली ज़रा भी ऊँची-नीची लगती तो वह हमको ज़रूर मार डालता। इसलिए जब शिकारी हाँके में बैठे तब उसे यह बात ज़रूर देख लेनी

चाहिए कि वहाँ से आसानी से हटने की जगह है या नहीं। एक बात यह भी है कि जब कभी मोर वगैरह आ रहा हो और एकाएक उड़कर झाड़ पर बैठ जावे, तब समझना चाहिए कि कोई जानवर इसके पीछे ज़रूर है। अगर हमने इस बात का ख़्याल न किया होता तो हमने ज़रूर बन्दूक में छर्रा भर लिया होता और भारी धोखा खाते।

उस दिन फिर और भी हाँका किया मगर कोई जानवर नहीं निकला। उस दिन शाम को आकर हम लोगों ने अपनी खाटें एक भारी आम के पेड़ के नीचे लगायीं मगर बदली शाम से ही घिर आयी थी, इससे पेड़ के नीचे से घसीटकर खाटों को मैदान में कर लिया। थोड़ी देर में पानी की बूँदें आयीं, तब फिर खाटों को झाड़ के नीचे किया। ख़ैर, पानी निकल गया और हवा भी अच्छी चली। हमारे साथ एक रिश्तेदार मिस्टर एस भी थे। पाँचों शिकारियों की खाटें बराबरी से थीं। उन्होंने मिस्टर ए से कहकर चुपचाप एक ढोलकी गाँव से मँगवा ली और बोले कि इसे बजाकर हम बिरहा गायेंगे। उन्होंने जो ढोलकी बजायी तो पेड़ पर बैठे हुए बंदर चीखमार कर खड़े होकर आवाज़ करने लगे। मिस्टर एस के बाजू में मिस्टर डी की खाट थी। उनको न मालूम क्या सूझा कि उन्होंने एक छर्रा भरकर ऊपर को फैर किया जिससे बंदर भाग जावें। फैर करते ही बंदर चीख उठे और चार-पाँच ने बीट कर दिया, जिससे मिस्टर डी की खटिया भर गयी।

वे बहुत गुस्सा हुए और कहने लगे कि अब इनको मारता हूँ। तब हम लोगों ने उनको समझाया-बुझाया।

उस वक्त हम लोग वहाँ एक ही दिन ठहरकर चले आये। सुअर यों तो हमने २५ से ऊपर मारे हैं, लेकिन इन बातों के अलावा कोई खास बात नहीं होती।

साम्हर

जिसे हिन्दी में साम्हर कहते हैं, उसीको बंगाली भाषा में गाउज़ और गोंड़ों की बोली में माश्रो कहते हैं। यह जानवर करीब करीब हिन्दुस्थान के सब जंगलों में पाया जाता है। इसके नर को ढाँक और मादा को सम्हरिया कहते हैं। जब नर पुराना हो जाता है, तब उसका रंग सुरंग दिखता है, मगर मादा और बच्चों का रंग महुआ सुरंग और हल्का मटीला होता है। नर के सींग होते हैं और मादा के नहीं। नर दूसरे साल में सींग फोड़ता है; पहिले साल में तो सिर्फ़ दो ही साखें होती हैं। जब वह दो साल का हो जाता है तब अकसर जुलाई व अगस्त में उसके सींग गिर जाते हैं और फिर नये सींग निकलते हैं। जब पहिले सींग निकलते हैं तब कच्चे होते हैं, याने उनपर एक किस्म का बहुत नरम चमड़ा होता है और उसपर बहुत बारीक रुँए रहते हैं, जो मखमल के माफ़िक नरम होते हैं। सींगों के भीतर खून भरा रहता है और जब वे पूरे बढ़ जाते हैं तब वह जमकर हड्डी हो जाता है। साम्हर सींगों को दरख़्तों से रगड़कर पतला चमड़ा निकाल डालता है और तब वे बहुत ख़ूबसूरत दिखते हैं।

जब तीसरी साल सींग फूटते हैं तब एक-एक तरफ दो-दो डालें हो जाती हैं। फिर जब ये गिर जाते हैं तब चौथी

साल एक-एक तरफ तीन-तीन डालें होती हैं। नीचे की दोनों तरफ की डालों को अँगरेज़ी में ब्राऊ एण्टलर्स (Brow-antellers), याने माथे पर के सींग कहते हैं। ये उतने बड़े नहीं होते जितनी बड़ी कि ऊपर की डालें होती हैं। पहिले आठ-दस साल तक तो साम्हर हर साल अपने सींग गिराता है, लेकिन इसके बाद से फिर हर दूसरे या तीसरे साल गिराता है। ३५-३६ इंच के सींग अच्छे समझे जाते हैं और इस ज़िले, याने जबलपुर ज़िले, में ४३॥ इंच तक के सींग देखे गये हैं। सारे मध्यप्रदेश में इससे बड़े सींग देखने में नहीं आते लेकिन भोपाल के नवाब साहब के यहाँ ५६ इंच का एक बहुत पुराना फुट-सींग है। मेरा ख़्याल है और इस बात की ताईद भी कई बड़े-बड़े शिकारी करते हैं कि मध्यप्रदेश का साम्हर कहीं के साम्हर से छोटा नहीं होता और न उसका सींग ही छोटा होता है।

साम्हर का शिकार चार किस्म से होता है।

(१) पनवा पर या छापर पर,

(२) हाँके में,

(३) बगाई में,

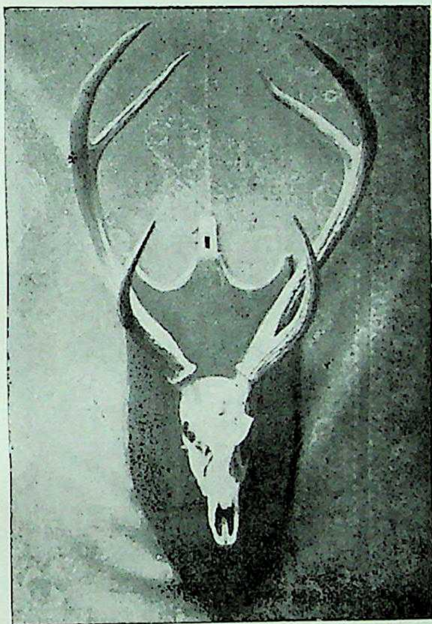
(४) बरछे और कुत्तों की मदद से।

(१) पनवा का शिकार सबसे सीधा व कम खर्च में होता है, मगर जो लोग असली शिकारी हैं वे इसे नफ़रत की नज़र से देखते हैं। दरहकीकत में इस तरह के शिकार में

ज़्यादा मिहनत व मशक्कत नहीं उठानी पड़ती; सिर्फ़ ऐसी कोई पानी की जगह तलाश करनी पड़ती है जहाँ कि साम्हर हर रोज़ पानी पीने को आता है। उस नाले, नदी, या तालाब के किनारे ज़मीन में गड्ढा खोदकर शिकारी पानी की तरफ़ पीठ कर रात होने के पहिले उसमें बैठ जाता है और जब जानवर पानी पीने को आता है तब उसपर फैर करता है। यह तरीका सिर्फ़ कटीले जानवरों के शिकार के लिए ही भला मालूम देता है, मगर हिरन, साम्हर, चीतल, नीलगाय वगैरह से हमला न करनेवाले जानवरों के लिए शिकारी को ऐसा तरीका अख़्त्यार नहीं करना चाहिए।

फिर भी इस तरीके में शिकारी कई बातें सीखता है। पहिले तो बिलकुल चुपचाप बैठकर सारी रात काटनी पड़ती है; तिसपर मच्छड़ तंग करते हैं और गड्ढे में कभी कभी पानी भी झिरता रहता है, मगर अकसर गड्ढा गीला होता है। इन सबसे शिकारी का धीरज बढ़ता है। अँधेरे में गोली मारना भी मुश्किल होता है, क्योंकि रात को मक्खी दिखती ही नहीं; गोली सिर्फ़ अन्दाज़ से चलायी जाती है अगर जानवर को गोली ठीक जगह नहीं लगी, तब वह फिर हाथ नहीं आता और कुल तकलीफ़ बेकाम जाती है। यह तरीक़ा अकसर नये शिकारी काम में लाते हैं।

छापर पर का शिकार पनवे पर के शिकार से कहीं अच्छा है। इसके लिए शिकारी को बहुत कोशिश करके



इसके सींग ४०½ इंच के हैं।

पृष्ठ १२८

छापर ढूँढ़ना पड़ता है। छापर उसे कहते हैं जहाँ की ज़मीन में कुछ नमक रहता है और अकसर बरसात में उस ज़मीन को चाटने के लिए बड़े-बड़े ढाँक जाया करते हैं। शिकारी ज़मीन में गड्ढा खोदकर, उसमें या किसी झाड़ी की आड़ में बैठकर शिकार करता है। इस शिकार में अकसर बड़े-बड़े सींगवाले साम्हर मिल जाते हैं। इस शिकार में पानी में भी भींगना पड़ता है, क्योंकि यह अकसर पानी के दिनों में ही होता है।

छापर के माफ़िक लुटने का भी शिकार होता है। लुटना पानी की उस जगह को कहते हैं जहाँ नर साम्हर रोज़ लोटने के लिए जाया करता है। ढाँक लम्पा घास खाता है, जो गरमी करता है। इससे वह कीचड़ में लोटता है। यह लुटना अकसर खुले मैदान में होता है, जिससे बैठने के लिए दरख़्तों की आड़ नहीं मिलती और फिर रात का वास्ता ठहरा। इससे गोली मारने में मुश्किल पड़ती है। अकसर तो शिकारी लोग वह रास्ता देख लेते हैं जहाँ से साम्हर बिना नागा लुटने को जाया करता है और उसी रास्ते में कहीं बैठ जाते हैं और क़ामयाब होते हैं। मेरे पास लुटान के मारे हुए जानवर का ४०½ इंच सींगवाला निहायत ख़ूबसूरत सिर है। लुटने की शिकार सिर्फ़ जाड़े में ही होती है, जबकि खूब ठंड पड़ती है। इसमें शिकारी को रात भर ठंड में बैठे रहना पड़ता है।

(२) हाँके का शिकार—मेरी समझ में साम्हर का शिकार करने का सबसे अच्छा व सहज तरीका यही है।

इसमें बहुत मिहनत व मशक्कत नहीं उठानी पड़ती मगर बहुत सहज में भी काम नहीं निकलता। इसमें पहिले एक पहाड़ी या भटलिया की तजवीज की जाती है जिसमें कि शिकार करना है। फिर कुछ हाँकनेवाले इकट्ठे किये जाते हैं। वे लोग तीन तरफ से उस पहड़िया को घेर लेते हैं और चौथी तरफ शिकारी बैठते हैं। तब हाँका शुरू कर दिया जाता है। शिकारी लोग बैठने के पहिले कटन या जहाँ-जहाँ से जानवरों के भागने की जगह है वहाँ बैठने का इन्तज़ाम कर लेते हैं। कोई-कोई शिकारी झाड़ पर और कोई ज़मीन पर, झाड़ी की आड़ में बैठते हैं। हाँका शुरू होने पर जानवर भागता हुआ निकलता है और शिकारी को उसे मारने का मौका मिल जाता है। मगर इस किस्म की शिकार में भी शिकारी को बहुत होशियार रहना चाहिए। यह शिकार देखने व लिखने में भले ही सहज मालूम पड़े लेकिन सचमुच में वैसा है नहीं। पहिले तो जानवर भागता हुआ आता है और बहुत ही थोड़ी देर के लिए दिखता है। फिर, वह बहुत थोड़ी जगह में दिखायी देता है और दरख़्तों की आड़ भी पड़ती है।

शिकारी को चाहिए कि हाँके के शिकार में हाँका शुरू होते ही घोड़े चढ़ा लेवे और बन्दूक को ऐसी रखे कि जब ज़रूरत हो फ़ौरन चला सके, नहीं तो वह भारी धोखा खा जावेगा। इसके अलावा हाँका ख़तम होने तक घोड़े नहीं उतारना चाहिए। यहाँ पर दो वाक़्ये लिखे जाते हैं, जिनमें

सिर्फ़ ऊपर लिखी बातों की गफ़लत से ही शिकारी को शिकार से हाथ धोना पड़ा।

सन् १६२४ के मार्च महीने का वाक़्या है कि एक कप्तान साहब ने सिलौंड़ी के जंगल का पर्मिट लेकर हमारे शिकारी अब्दुल्ला को शिकार के वास्ते माँग लिया। वहाँ जाकर उसने हाँके का कुल इन्तज़ाम किया। जब हाँका हुआ तब चीतलों का एक झुंड साहब के साम्हने से निकला। उसमें सब मादा थीं। साहब ने बन्दूक नीचे रख दी। उसी समय एक बड़ा ढाँक उनके करीब २० गज़ दूर से निकला। जब तक साहब ने बन्दूक उठाकर घोड़े चढ़ाये, तब तक वह निकल गया और साहब ताकते रह गये। अगर बन्दूक तैयार रहती तो मुमकिन नहीं था कि फ़ैर करने को न मिलता।

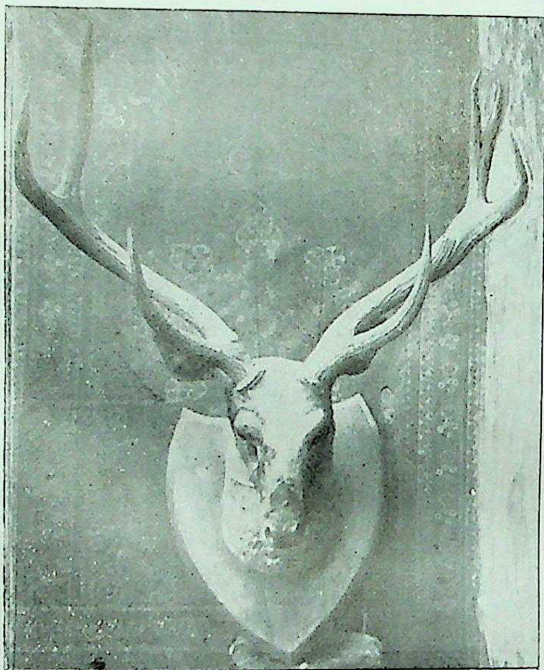
एक दूसरा वाक़्या सन् १६२४ के फ़रवरी महीने का है। हमारे एक बड़े दोस्त शेर के शिकार के वास्ते गये। ये बहुत अच्छे शिकारी हैं, लेकिन उस वक्त तक इन्होंने जंगल में शेर न तो देखा था और न मारा था, हालाँकि दूसरे कई किस्म के जानवरों का शिकार खूब खेला था। शेर के गारे की खबर मिलते ही आप वहाँ को रवाना हुए और वहाँ पहुँचकर हाँके का इन्तज़ाम किया। शिकार के वास्ते आप और जंगल के रेंज अफ़सर एक मचान पर बैठे। मचान को उन्होंने पहिले नहीं देखा था। मचान आगे को ऊँचा और पीछे को नीचा था, जिससे बैठने में बहुत तकलीफ़ हुई। हाँका

शुरू होने के बड़ी देर बाद चीतलों का एक झुण्ड आपके साम्हने आया। उसमें एक नर भी था, जिसके सींग बहुत बड़े थे और जो बहुत पुराना था। आपने बन्दूक उठायी, लेकिन शेर का हाँका होने की वज़ह से फैर नहीं किया और ढाँक चला गया।

थोड़ी देर में एक दूसरा बड़ासा साम्हर उसी तरफ से निकला, लेकिन इन्होंने उसे भी जाने दिया। इतने में हाँकेवाले इतने पास आ गये कि उनकी आवाज़ साफ़ सुनायी देने लगी। तब हमारे दोस्त ने रेंजर से कहा कि यहाँ तो इतने साम्हर-चीतल भरे हैं कि मुमकिन नहीं कि शेर हो। रेंजर ने भी हाँमें हाँ मिलाकर कहा कि आप बिलकुल ठीक कहते हैं, यहाँ शेर है ही नहीं। हमारे दोस्त ने राइफ़ल के घोड़े उतार दिये और कारतूस निकालकर पेंट के खीसे में डाल लिये। इसके बाद जब उन्होंने अपने बायें को देखा तो वहाँ एक भारी बाघ खड़ा पाया। जब तक आपने कारतूस निकाले तब तक शेर चला गया। आपको सख़्त रंज हुआ।

इस तजुर्बे के बाद आपने एक महीने में तीन शेर और दो गुलबाघ मारे।

मेरी समझ में शिकारी जब हाँके में बैठे तब घोड़े चढ़ा लेवे और जब तक हाँका ख़तम न हो जाय उनको कभी न उतारे। इसके साथ ही साथ यह भी ध्यान रहे कि हाँका ख़तम होते ही घोड़े उतार दिये जावें और कारतूस भी निकाल लेना चाहिए।



इसके सींग ४३½ इंच के हैं।

पृष्ठ १३३

३० जनवरी सन् १६२२ को मैं डोभी के जंगल में हाँका खेलने को गया था। जब हाँका करीब ख़तम होने को आया, तब एक बन्दूक की आवाज़ हुई। एक शिकारी मुझसे पहिले बैठे थे, उनके पास से एक साम्हर निकला मगर उन्होंने बन्दूक भरी ही न थी। जल्दी से बक-शॉट भरकर उन्होंने भागते हुए साम्हर पर फैर किया। फैर उसे लगा नहीं। फिर वह साम्हर मेरे साम्हने से निकला और मैंने बंद को जोड़कर फैर किया, मगर साम्हर पहाड़ी पर चढ़ता ही चला गया। वह चलने में कुछ झोक खाता था, जिससे मुझे भरोसा हो गया कि उसे गोली लग गयी है। मैं भी उसके पीछे-पीछे पहाड़ी पर चढ़ गया। जब तक मैं उसके पास तक पहुँचा, तब तक वह एक झाड़ से टिककर गिर पड़ा था। उसे गोली ठीक बंद पर पड़ी थी। साम्हर बहुत बड़ा था और उसका रंग काला सुरंग था। उसके सींग बहुत ख़ूबसूरत थे और ३६ इंच लम्बे थे। उनकी मोटाई जड़ के पास १०½ इंच थी और उसकी बड़ी शाखा की मोटाई कम से कम ८ इंच थी। इस साम्हर में करीब १२ मन गोश्त निकला और उसे उठाने में २५ आदमी लगे थे।

शिकारी को हमेशा धीरज रखना चाहिए और हर किस्म की दिक़्क़त व तकलीफ़ उठाने को तैयार रहना चाहिए, तभी काम पूरा हो सकता है।

एक बार सन् १६१८ के ठंड के दिनों में मेरे दो दोस्त–एक तो मिर्ज़ाजी और दूसरे मिस्टर ए—एक शनिवार की

शाम को मिले और यह तय किया कि दूसरे दिन बड़े तड़के मोटर-साइकिल (फटफटी) में सवार होकर अमझर चला जाय और फिर वहाँ हाँका करके शिकार खेलें। मिस्टर ए मोटर-साइकिल चला लेते थे। अपने इरादे के मुताबिक हम तीनों शिकारी मय साइडकार के मोटर-साइकिल पर सवार होकर, इतवार को बड़े तड़के जबलपुर से रवाना हुए और बिना किसी दिक़त के अमझर पहुँच गये। यह जगह कुंडम सड़क पर जबलपुर से १२ मील है। हमारे पास एक बार के खाने का सामान था।

ख़ैर, हम लोगों ने अमझर गाँव से १०-१२ आदमी इकट्ठे किये और लोहकरी के मालगुजारी जंगल का हाँका शुरू किया। पहिले ही लग्गे में दो साम्हर मेरे साम्हने से दौड़ते हुए निकले। मैंने ३५५ बोर की राइफल से बड़े साम्हर को मारा और वह वहीं गिर पड़ा। दूसरे साम्हर पर भी फैर किया, लेकिन उसे गोली लगी नहीं। हम सब वहाँ इकट्ठे हुए और उस साम्हर को उठवाकर तालाब के पास लाये, जहाँ उसे छिलवाना शुरू किया। इस समय करीब ८½ बजा था। हम लोगों ने वहीं बैठकर नाश्ता किया और चूँकि पूरा दिन पड़ा था इसलिए हमारे साथी बोले कि और २-४ लग्गे हाँक लेवें। हमारा दिल बढ़ा हुआ था, इससे हम भी राज़ी हो गये।

इस बार हाँका करने के लिए हम लोग दो मील जंगल के भीतर गये और वहाँ हाँका करना शुरू किया। करीब ६

लग्गे हाँके लेकिन एक भी जानवर नहीं निकला। हम लोग खूब हैरान हुए। अब शाम के तीन बज चुके थे। इतना वक्त हुआ देखकर हम लोगों ने तय किया कि अब आख़री लग्गा और हाँक लेवें। यह लग्गा हाँका ही जारहा था कि बादल घुमड़ आये और पानी ज़ोर से बरसने लगा। हम लोग बिलकुल लताफ़त हो गये। ख़ैर, लग्गा किसी तरह से ख़तम किया और जहाँ सवेरे साम्हर छोड़ आये थे, वहाँ को चले। इस समय पानी थम गया था और शाम के ५ बज चुके थे। ये दिसम्बर का महीना था और हमें पानी बरसने की कोई उम्मीद ही नहीं थी। उस जगह से साम्हर का सिर, चमड़ा वग़ैरह लेकर मोटर-साइकिल के पास अँधेरा होने के पहिले पहुँच गये।

सब सामान मोटर-साइकिल में रख दिया और फिर उसे घुमाने लगे कि टायर बर्स्ट हो गया। बड़ी मुश्किल से उसे सुधारा, मगर अब एक ट्यूब मेंसे हवा निकल गयी। इधर पानी भी ज़ोर से बरसने लगा। हम लोग मैदान में एक झाड़ के नीचे थे। वहाँ पानी से ज़रा भी न बच सके। जैसे-तैसे गाड़ी ठीककर उसे रास्ते पर लाकर लेम्प जलाया। वहाँ से जबलपुर आने में आधा घंटा से ज़्यादा नहीं लगता। यह सोचकर हम लोग गाड़ी में बैठे, लेकिन रास्ते की हालत कुछ और ही देखी।

जबलपुर से ६ मील तक तो बिलकुल पक्की सड़क है, जिस पर मुरम है, लेकिन उसके बाद सड़क पर खेतों की मिट्टी

खोदकर डाल देते हैं। पानी बहुत बरसने से मिट्टी फूल गयी थी, जिससे वह चकों में गोंद के माफ़िक चिपकने लगी और गाड़ी नहीं चल सकी। हम लोगों ने गाड़ी पर से उतरकर उसे ठेलना शुरू किया और बमुश्किल २ घंटे में एक मील लाये। अब हम नागा पहाड़ की घाटी में पहुँचे, जहाँ जंगल बहुत घना है और दिन को भी अँधियारा रहता है। इस समय तो रात थी और घनघोर घटा छायी हुई थी और पानी ज़ोर से गिर रहा था। हवा भी ज़ोर पर थी और हम लोग बिलकुल भींग गये थे। अब भूख भी ख़ूब लग आयी थी और दिन भर मिहनत करने से ख़ूब थक भी गये। मोटर का लेम्प भी कम रोशनी देने लगा था। उसे सुधारने लगे तो वह बुझ गया, क्योंकि उसमें कारबाइड काम में आता था। जैसे-तैसे उसे ठीककर उसमें साइडकार के गद्दे के नीचे से निकालकर कुछ कारबाइड भरा। अब दियासलाई ढूढ़ी तो सबके जेबों की भींगी हुई थी, मगर मेरे पास की ठीक थी। उसे निकालकर ज्योंही मैंने काड़ी जलानी चाही, त्योंही पूरी डब्बी एक पानी की बाल्टी में गिर पड़ी और खुल गयी। बस, अब दियासलाई को भी खोया।

इसी दरम्यान में एक गाड़ीवान निकला, जो अपना छकड़ा लिये झमझम जा रहा था। उसे बड़ी मुश्किल से राज़ी किया कि वह उमरिया तक पहुँचा दे। मोटर-साइकिल को रस्सों से गाड़ी से बाँधा। हम मेंसे दो आदमी बैल गाड़ी पर

सवार हो गये और तीसरे ने फटफटी का हेंडिल सँभाला। यह सब होने पर भी १०० गज़ जाने पर मोटर-साइकिल घसिटने लगी। बैलगाड़ी को खड़ा किया और देखा तो हमारी गाड़ी के मडगार्ड में रास्ते की चिकनी मिट्टी भर गयी थी जिससे चक्का घूम नहीं सकता था। १५ मिनट में मिट्टी निकाली और फिर चले, लेकिन १०० गज़ जाने पर फिर वही हाल। १५ मिनट फिर मिट्टी निकालने में लगे। इस तरह से बड़ी तकलीफ़ उठाते हुए १½ बजे रात को कहीं उमरिया पहुँचे। वहाँ जंगल मुहकमा के डिप्टी रेंजर रहते थे और इत्तिफ़ाक से वे मिस्टर ए की पहिचान के निकले। गाड़ी उन्हीं-के दरवाज़े पर छोड़ दी और उन्हींके मकान की दहलान में बसेरा लिया। ठंड के मारे हम लोग अकड़ से गये थे। रेंजर साहब ने आग जलायी और फिर चा बनाकर हम लोगों को दी, मगर खाने का कोई इन्तज़ाम उनके पास न था। उन्होंने दो छोटी-छोटी खाटें भी हम लोगों को दीं। हम लोगों ने अपने कपड़े आधे पहिनकर आधे आग की आँच में सुखाना शुरू किया। पानी और भी ज़ोर से बरसने लगा और हवा ने भी ज़ोर पकड़ा। ठंड जुदी लगती थी। रेंजर साहब ने दो कम्बल दिये, जिनको ओढ़कर गप्पें करते हुए हम लोगों ने रात काटी।

बड़े सवेरे पानी और हवा दोनों बन्द हो गये। अब जबलपुर आने का इरादा किया और देखा तो मोटर-साइकिल में पानी भर गया था और डायनेमो स्पार्क नहीं देता था।

आठ बजे तक बहुत कोशिश की, लेकिन गाड़ी चालू करने में कोई क़ामयाबी न हो सकी। वह दिन सोमवार का था और कचहरी में मुझे बहुत काम था, जिसका मैंने कोई इन्तज़ाम नहीं किया था, याने मुझे कचहरी ज़रूर पहुँचना था। इस सबब से मोटर-साइकिल के पास मिर्ज़ाजी को छोड़कर मैं एक बन्दूक लेकर मिस्टर ए के साथ रवाना हुआ और ११ बजे दिन को घर पहुँचा। घर पहुँचने पर मालूम हुआ कि मुंशीजी मुक़दमों की फाइल कचहरी ले गये हैं और कह गये हैं कि काम ज़्यादा है, इसलिए आते ही कचहरी भेज देना। बस, मैं फ़ौरन कचहरी गया और वहाँ से पाँच बजे शाम को फ़ुरसत मिली। घर आकर मैंने ११ बजे ही अपने ड्राइवर को उमरिया रवाना कर दिया था और शाम को वह मिर्ज़ाजी के साथ मोटर-साइकिल लेकर वापिस आ गया।

अब आप लोग समझ सकते हैं कि शिकार में कितनी तकलीफ व मिहनत-मशक़्क़त उठानी पड़ती है।

ऊपर जो वाक़्यात लिखे हैं, उनमें कमसे कम शिकार तो मिली थी, मगर ऐसे बहुतसे मौके हुए जिनमें शिकार मिलना तो दूर रहा, बीस-बीस मील चलना पड़ा है और कुछ भी हाथ नहीं आया। हम असल में शिकारी को यह जतला देना चाहते हैं कि ऐसे खाली हाथ लौटने के मौके ज़्यादा होते हैं और शिकार लेकर लौटने के कम। असली शिकारी तो वे हैं जो बिना शिकार के लौटने का रंज नहीं मानते।

यह बात तो सिर्फ़ मौके की है कि शिकार हाथ लग जाय, मगर ज़्यादातर कुछ नहीं मिलता। शिकारी तो वे ही हैं जो अपने शौक के आशिक होते हैं और अपनी माशूका शिकार को किसी भी हालत में नहीं छोड़ते। बल्कि उनको जितनी कम कामयाबी होती है उतना ही उनका शौक बढ़ता जाता है।

अब एक वाक़्या और सुनिये।

सन् १९१४ का ज़िक्र है कि मैं और दोनों भाई मिर्ज़ा, याने हम तीन आदमी गधेड़ी गये और वहाँ हाँका किया। पहिले ही लग्गे में पाँच साम्हर, जिनमें दो नर थे, मेरे साम्हने आये। बड़े मिर्ज़ा अलहदा बैठे थे लेकिन छोटे मिर्ज़ा मेरे पास ही बैठे थे। मेरे हाथ में १२ नम्बर की दुनाली बन्दूक थी। मैंने पहिला फ़ैर भागते हुए साम्हर पर मारा। गोली उसे लगी मगर वह गिरा नहीं। जब वे मेरी बराबरी से आये तो दूसरा फ़ैर मैंने दूसरे नर को मारा, मगर वह भी गिरते-पड़ते निकल गया। मैं ठीक एक पहड़िया के नीचे बैठा था और मेरे पीछे पहाड़ी सीधी खड़ी थी। ये पाँचों साम्हर उसपर सीधे चढ़े। तीन तो चढ़ गये, मगर जिन दो को गोली लगी थी वे बीच में जाकर रह गये; चढ़ने की कोशिश करें और गिर पड़ें। मैं यह देखतेही रह गया। मिर्ज़ाजी ने मुझसे बन्दूक लेकर दो फ़ैर दोनों को मारे और वे उनको लगे भी, मगर फ़ैर लगते ही वे चढ़ गये। हम लोग भी टिकरिया पर चढ़े और देखा तो खून की धार लगी थी, मगर साम्हर आगे बढ़ गये थे।

यह बात करीब ६ बजे सबेरे की है। हम दोनों ने खून का पीछा पकड़ा, मगर साम्हर हाथ न आये और इसीमें शाम के पाँच बज गये। हम लोगों को खाली हाथ वापिस आना पड़ा। दूसरे दिन ख़बर मिली कि जहाँ तक हम लोग गये थे उससे आधा मील पर ही दोनों साम्हर गाँववालों को मरे मिले।

अब इस हाँकेवाले अध्याय को एक और वाक़्या देकर ख़तम किया जाता है।

ये ही दोनों मिर्ज़ा जो मेरे बड़े भारी दोस्त हैं, एक गाँव के मालगुज़ार हैं। वहाँ इन्होंने गेहूँ बोया था और फसल अच्छी खड़ी थी। दोनों भाई जबलपुर आ गये थे। जब ये गाँव पर गये तब इन्होंने देखा कि खेत का एक खूँट किसीने बिलकुल चर लिया है। इन्होंने जब अपने हरवाहे को बहुत ताक़ीद किया, तब वह बोला कि मालक मैं खुद ही खेत रखाता हूँ और एक भी ढोर खेत पर नहीं गया है। बड़े मिर्ज़ा ने खुद खेत पर जाकर देखा तो वहाँ लील की बड़ी-बड़ी लेड़ियाँ कई जगह मिलीं। तब तो उनने खेत में दो गड्ढे बनवाये और रात को एक में खुद बैठे और दूसरे में अपने छोटे भाई को बैठाया। रातको करीब एक बजे 'चर-चर' चरने की आवाज़ आयी। उन्होंने देखा कि कोई जानवर छोटे मिर्ज़ा के गड्ढे के पास चर रहा है। वह वहाँ लगातार एक घंटे तक चरा और फिर बड़े मिर्ज़ा की तरफ़ को चला गया। जब वह

उनके पास गया तब उन्होंने देखा कि वह एक ख़ासा बड़ा लील है। उन्होंने बन्दूक उठाकर फ़ैर मारा, मगर लील भाग गया। अब बड़े मिर्ज़ा उठकर छोटे भाई के गड्ढे पर गये तो उनको सोता पाया। उन्हें जगाकर लील को ढूँढ़ा, मगर वह मिला नहीं। ख़ैर, घर लौट आये और सलाह की कि सवेरे उसे देखेंगे।

सवेरे आठ-दस आदमी इकट्ठेकर वे लील को ढूँढ़ने गये। एक मील तक तो खून मिला लेकिन फिर कुछ भी खून का पता नहीं लगा। चार मील तक ढूँढ़ा, मगर फिर भी कुछ नहीं मिला। तब एक भटलिया मिली। उन्होंने कहा कि इसे हाँके लेना चाहिए, अगर इसमें होगा तो निकल आयगा। उसे हाँकने पर एक भारी साम्हर बड़े मिर्ज़ा के साम्हने से दौड़ता हुआ निकला। उन्होंने फ़ैर किया जो उसे लगा, मगर वह चला ही गया। और फिर छोटे मिर्ज़ा की तरफ़ से निकला। उन्होंने भी फ़ैर किया जो उसे लगा मगर वह फिर भी भागता ही गया। अब दोनों भाई ख़ून देखते हुए उसके पीछे चले। उन्होंने थोड़ी ही दूर जाने पर देखा कि साम्हर एक बाँसभेड़े से झूल रहा है। वे दोनों दौड़ पड़े और बमुश्किल बाँसों को झुकाकर उसे निकाला और हलाल किया। ऐसा मालूम पड़ता है कि जब साम्हर ने भेड़े के बगल से एक गड्ढे उस पार कूदना चाहा तब उसका सिर बाँसेन में अटक गया और वह वहीं मर गया। दोनों गोलियाँ उसे बराबर लगीं थीं।

जब वे लौटने लगे तो पास ही गिद्ध गिरते हुए दिखलायी पड़े। वहाँ जाकर उन्होंने देखा तो एक भारी लील पड़ा था। जिसे दूसरे गाँव के लोग उठाने की कोशिश कर रहे थे। उसे गोली वंद पर तो पड़ी थी मगर कुछ ऊँची हो गयी थी।

(३) वगाई का शिकार—इस किस्म का शिकार वहुत मुश्किल व तकलीफ़ से मिलता है। अगर दिन भर तकलीफ़ सहने पर एक भी जानवर मिल गया तो समझना चाहिए कि शिकार वहुत अच्छा हुआ। हमने जो वाक़्यात लिखे हैं वे सव सच हैं, उनमें ज़रा भी नमक-मिर्च नहीं मिलाया, हालाँकि हम यह जानते हैं अगर एक की जगह चार जानवर मारे जाने का लिखा होता तो पढ़नेवालों को वहुत अच्छा लगता। मगर ऐसा लिखने से शिकारियों के दिल में यह गलत ख़्याल पैदा हो जाता है कि शिकार करना वायें हाथ का खेल है। दरहक़ीक़त में वह खुशी जो जानवर मारने पर होती है, उस रंज से कहीं कम है, जो निशाना चूकने से शिकार के निकल जाने पर, होता है। इसके अलावा कई मर्तवे ऐसे मौके आते हैं जव एक भी जानवर देखने तक को नहीं मिलता और खाली हाथ वापिस आना पड़ता है। ऐसे मौके वहुत आते हैं।

अव यह देखना चाहिए कि इस वगाई शिकार के लिए क्या-क्या वातें ज़रूरी हैं। पहिले तो यह शिकार जाड़े के

मौसम के आखीर में होता है, जब खेतों में फ़सल खड़ी रहती है। उस वक्त यह मालूम करना होता है कि साम्हर खेत पर चरने आते हैं या नहीं; फिर अगर वे आते भी हैं तो उनका यह दस्तूर होता है कि वे सवेरा होने के पहिले ही पास के किसी नदी, नाले या तालाब में पानी पीकर अपने दिन के मुक़ाम को चले जाते हैं। यह जगह अकसर खेतों से कई मील के फ़ासले पर होती है। शिकारी को चाहिए कि वह बड़े तड़के उठकर दो-चार आदमियों को साथ में लेकर उस तरफ को जावे, जहाँ साम्हरों के दिन के रहने की जगह है और चार आदमी करीब दो बजे रात से ही उस जंगल या पहाड़ी में भेज देना चाहिए। ये आदमी दो-दो करके, दिन निकलने के पेश्तर किसी ऊँचे पत्थर या दरख़्त पर जा बैठें और जब कोई ढाँक दिखायी पड़े तो ये देखना चाहिए कि वह किस जगह बैठता है। फिर दो मेंसे एक आदमी आकर शिकारी से पहिले तय की हुई जगह पर मिले।

इधर शिकारी को या तो घूमते-करते में कोई साम्हर अपने दिन के मुकाम को लौटता हुआ मिलेगा, अथवा उसके आदमियों मेंसे कोई साम्हर का पता देगा। तब शिकारी उस आदमी को लेकर साम्हर की तरफ रवाना हो। बहुत दफ़ा तो साम्हर मिल जावेगा, लेकिन जब वह अपनी बैठक में बैठता है तब बड़ी मुश्किल से पहिचाना जा सकता है। वह सागौन या किसी और दरख़्त के पास ऐसी जगह बैठता है जहाँ दो-तीन बजे दिन को उस झाड़ की सबसे गहरी छाया पड़ती हो।

यहाँ पर इस बात को याद रखना चाहिए कि हरएक साम्हर अपनी-अपनी अलहदा बैठक बनाता है और बड़े व पुराने नर अलग रहते हैं। छोटे नर व मादा भी सिवाय नवम्बर व दिसम्बर के, जब वे मस्त रहते हैं, अलहदा रहते हैं।

हालाँकि साम्हर बहुत बड़ा और काले से रंग का जानवर होता है, याने उसका रंग आसपास के चारे के रंग से गहरा होता है, तौभी अगर वह बैठा हो और शिकारी बहुत पास न हो, तो वह नहीं पहिचाना जा सकता। उसके बड़े-बड़े सींग सागौन की पतली डगालियों से बिलकुल मिल जाते हैं। कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि उसके बिलकुल पास से भी अगर शिकारी निकले तो वह चुपचाप बैठा रहेगा और वह ज़रा भी पहिचाना नहीं जा सकेगा। फिर, ज्योंही शिकारी आगे बढ़ा कि उसने चल दिया।

एक बार मैं रीछ की शिकार के लिए झाझा गया था। वहाँ पर भाँडेर पहाड़ है जो १,००० फुट ऊँचा मीलों चला गया है। उस पहाड़ के ऊपर चौरस मैदान है। पहाड़ एक सीधी लकीर के माफ़िक नहीं है, बल्कि घुमावदार है और उसमें कच्छ और मच्छ दोनों किस्म के कोने हैं।

एक मर्तबा मैं यहाँ की कतियों पर ४ बजे शाम को रीछ की फ़िराक में घूम रहा था। जिस कतिया पर मैं था उसके बगल की कतिया पर दरख़्त बहुत घने थे। वहाँ एक सागौन के पेड़ के नीचे मुझे दो सूखी डगालें दिखायी दीं।

मैंने गौर करके देखा तो एक पत्ती हिली। इन दोनों मच्छों के बीच में चार-पाँच सौ गज़ का अन्तर था, मगर दोनों के बीच का रास्ता एक मील से कम न होगा। मैं वहाँ ही खड़ा रहकर बड़ी देर तक इन्हीं लकड़ियों पर नज़र रखे रहा। फिर मालूम हुआ कि वहाँ साम्हर है और जो पत्ती हिली थी वह उसका कान है। अब आप समझ सकते हैं साम्हर कितना बड़ा होगा। मेरे साथ अमोदा के मालगुज़ार भी थे। उनको मैंने यह बताया और उन्होंने इसे माना। फिर हम लोग वहाँ को रवाना हुए और उस कतिया में पहुँचने पर घना जंगल मिला जिसमें से बड़ी मुश्किल से रास्ता मिलता था। ठीक जगह का पता न लगा सके मगर वहाँ बड़ी होशियारी से आगे बढ़े। हमारे साथ में और भी कई आदमी थे जो हमसे पीछे रह गये थे। उनमें से किसी एक का पैर सागौन के सूखे पत्ते पर पड़ गया। बस, ऐसी आवाज़ हुई जैसे किसी ने पटाका चलाया। उसके साथ ही साथ दो बड़े साम्हर हमारे पीछे से चल दिये। हम उन्हीं के पास से आगे बढ़ गये थे। जंगल बहुत घना होने से पहिला साम्हर तो दिखा ही नहीं और दूसरा कुछ कुछ दिखा। मैंने लौटकर राइफ़ल का फैर किया, मगर गोली चूक गयी। बस जनाब कुल मिहनत और ढुकाई बेकार हुई।

साम्हर जो अपनी बैठक बनाते हैं उसकी तजवीज़ उस समय करते हैं जब चारा हरा रहता है और फिर उसे साल

भर नहीं छोड़ते। जंगल के लकड़हारों से अकसर खबर मिल सकती है कि कौनसी पहड़िया पर साम्हर ज़्यादातर चरते या बसते हैं। ऐसा पता मिल जाने से शिकार भी अच्छी होती है। अगर आप के पास हाथी हो तो फिर क्या पूछना है। दोपहर को हाथी पर से बहुत अच्छी शिकार हो सकती है, क्योंकि उसपर से दूर तक दिखता है।

इस तरह से हाथी पर शिकार में जाने पर कभी कभी खड़े साम्हर पर भी गोली चलाने का मौका मिल जाता है। इसका सबब यों है कि ज्योंही साम्हर को ज़रासा भी शक हुआ त्योंही वह उठकर खड़ा हो जाता है और भागने के पहिले दो-तीन सेकण्ड तक खड़ा रहता है। लेकिन अकसर साम्हर भागता हुआ ही मिलेगा और शिकारी की तारीफ़ तो तभी है जब वह भागते हुए जानवर को गोली मार सके। अच्छे-अच्छे शिकारी निशाना मारने में चूक जाते हैं मगर कुछ अभ्यास होने से गोली ठीक लगने लगती है।

एक मर्तबा सन् १९१६ में मैं और मिस्टर ए सिंगरामपूर गये। वहाँ हम लोग शाम को पहुँचे और ४ बजे सबेरे से ही उठकर मोहरी पर जा बैठे। उस समय दिन ठीक निकला नहीं था, कुछ झुलपुट सी थी। इतने में करीब २५० गज़ पर कुछ जानवर दिखे। मिस्टर ए बोले कि ये सुअर हैं, मारो मत, बहुत दूर हैं। करीब पाँच मिनट में ये एक टेकरी पर चढ़ गये। मैंने अपनी ३५५ बोर की राइफ़ल उठायी लेकिन मिस्टर ए ने नाल

पकड़ ली और कहा कि ये जानवर बहुत दूर हैं और अभी उजेला ठीक नहीं है।

असल में ये जानवर साम्हर थे और तादाद में करीब १५ के थे। जंगल उनसे कोई २० हाथ पर ही था। वे एक-एक करके जंगल के भीतर कतार बाँधकर घुसने लगे। तब मैंने बन्दूक को जोड़ा लेकिन मिस्टर ए के नाल पर हाथ रख देने से फ़ैर न कर सका। जब सिर्फ एक साम्हर जंगल के बाहर रह गया तब मिस्टर ए ने नाल पर से हाथ उठाया। बस, उसी दम मैंने उस आख़िरी साम्हर पर फ़ैर किया। जब धुँआ साफ़ हो गया तब वहाँ कुछ भी नहीं दिखा और मिस्टर बहुत नाराज़ हुए। वे कहने लगे कि आपने फ़िज़ूल ही फ़ैर किया; अब ये साम्हर बगाई में न मिलेंगे। उनके इतना कहने पर भी मेरा दिल न माना और मैं अपने ड्राइवर चुन्नीलाल को साथ लेकर जगह देखने चला जब मैं वहाँ पहुँचा तब ज़रा ज़्यादा उजेला हो गया था। मैंने देखा कि जहाँ साम्हर जंगल में घुस रहा था, ठीक उसी जगह वह पड़ा है। गोली ठीक बंद पर पड़ी थी। फिर मैंने मिस्टर ए को बुलाया और उन्होंने उसे हलाल किया।

उसी दिन का एक और वाक्या है। जब शाम को हम उसी जंगल मेंसे मोटर में घर वापिस आ रहे थे तब वहाँ एक मोड़ पड़ा जहाँ मोटर धीमी कर ली। इतने में हमने देखा कि तीन-चार साम्हर सड़क के किनारे खड़े हैं और मोटर को देख

रहे हैं। मिस्टर ए आगे की सीट पर बैठे थे और उनके हाथ में हमारी १६ नम्बर की दुनाली बंदूक थी जिसमें दोनों नाल में गोली के कार्तूस भरे थे। मैंने कहा मारना और मिस्टर ए ने फैर किया। मोटर इतनी देर में आगे निकल गयी थी, मगर मेरी नज़र पीछे की तरफ थी। ऐसा मालूम पड़ा जैसे कोई चीज़ हिल रही है। मैंने मोटर को रुकवाकर बैक (पीछे) लेने को कहा। उतरकर देखा कि एक साम्हर की गर्दन पर गोली लगी है और वह चित्त पड़ा है। उसे उठाकर मोटर पर लादा और फिर रवाना हुए।

यह दिन बहुत किस्मतवर था, क्योंकि सुबह-सुबह एक बड़ा साम्हर मारा था, दोपहर को दो बड़े चीतल मारे और ८ बजे रात को चलती मोटर पर से फिर एक साम्हर का शिकार किया। मगर ऐसे किस्मतवर दिन मेरी ज़िन्दगी में बहुतही थोड़े हुए हैं और दूसरे शिकारियों के साथ भी ऐसा ही हाल होता है।

एक मर्तबा मैं कटाव गया। इस जगह को पहुँचने के लिए जबलपुर से दमोह सड़क पर तीस मील दूर गुवरा गाँव तक जाना पड़ता है। वहाँ से पूरब को एक रास्ता फूटी है। उस रास्ते पर तीन मील पर कटाव है। यहाँ पर कायर और फ़लगू दो नदियों का संगम है। कायर नदी कैमोर पहाड़ को काटती हुई इसी जगह निकली है जिससे इसका नाम कटाव पड़ा है। यह जगह बहुत ही दिलचस्प है। अव्वल तो लाल

रंग के पत्थरवाला कैमोर पहाड़ दोनों तरफ कम से कम ३०० फुट ऊँचा दीवाल के माफिक खड़ा है। दोयम उसके बीच में ५० गज़ चौड़ी नदी की धार है जिसमें पानी बहुत गहरा और नीले रंग का है। फिर पानी बड़ी-बड़ी चट्टानों पर से गिरकर बहता है जिससे कलकल आवाज़ होती है जो सुनने में बहुत मीठी लगती है। नदी में एक ही बड़ी धार नहीं है, बल्कि पत्थरों के बीच से बहने के कारण कई छोटी-छोटी धाराएँ हो गयी हैं। दोनों तरफ पहाड़ पर हमेशा हरे-भरे रहनेवाले बड़े-बड़े दरख़्त खड़े हैं और उसी नदी की पार पर से एक उम्दा पक्की सड़क सन् १९०० के अकाल में बनायी गयी थी। इसके सिवाय सड़क नदी से करीब ५० फुट ऊँचे पर है। सड़क से नदी में पहुँचने के लिए पहाड़ काटकर सीढ़ियाँ भी बनायी गयीं थीं। जहाँ नदी ने पहाड़ काटा है ठीक उसी जगह सड़क भी घूमी है और यह घुमाव ३०० गज़ का है। इस दृश्य की शोभा दूर तक दिखायी देती है। इस घुमाव को पार करने के बाद में दूसरा घुमाव पड़ता है और वहाँ कायर नदी का उम्दा काले पत्थर का पुल बना हुआ है। यहाँ ईश्वर की लीला बड़ी अद्भुत दिखायी देती है। इससे ज़्यादा सुहावनी जगह मेरे ख़्याल में दुनियाँ में बहुत ही कम होंगी। जबलपुर का भेड़ाघाट भी संसार में बहुत ही मशहूर जगह है, लेकिन कटाव भी सुन्दरता में उससे टक्कर ले सकता है।

कटाव जाते वक्त एक साम्हर गूलर के झाड़ के नीचे उसके फल खाते हुए नज़र आया था, मगर मोटर रोकते-

रोकते उसने चल दिया। मैं वहीं उतर पड़ा और चक्कर लगाकर कैमोर पहाड़ पर चढ़ा और ढूँककर उसे मारा। साम्हर पट्ठा ही था और उसके सींग मामूली थे।

असल में साम्हर का शिकार पैदल, वगाई और ढुकाई में होता है। इसके बराबर मिहनत और किसी शिकार में नहीं पड़ती।

(४) साम्हर का शिकार—बरछे और कुत्तों की मदद से—साम्हर का शिकार अकसर गोंड़ और बञ्जारे लोग करते हैं लेकिन कभी-कभी अँग्रेज़ लोग भी इस तरह का शिकार खेलते हैं। मगर असली शिकार गोंड़, बञ्जारे वगैरह ही किया करते हैं। बंजारों के पास एक खास नसल का कुत्ता होता है जिसे बंजारा कुत्ता कहते हैं। इसमें अच्छा कुत्ता २४ से २८ इंच तक ऊँचा होता है। यह बड़ा हिम्मतवर और बहुत ताकतवाला होता है और मालिक को जान से ज़्यादा चाहता है। इन्हीं कुत्तों के बल पर बंजारे लोग अपने टाँड़ों को लेकर जंगल में बस जाते हैं।

वे लोग इस किस्म से शिकार खेलते हैं। मान लीजिये कि एक पहाड़ दक्षिण से उत्तर को गया है और उसके पश्चिम में मैदान, नाले, झाड़ी वगैरह हैं। १५-२० आदमी इकट्ठे हुए और उनमें से चुने-चुने ६ आदमी भाला लेकर ६० कुत्तों के साथ तैयार हो गये। उनमें से दो आदमी दो कुत्तों को रस्से से बाँधकर पहड़िया के नीचे ऐसी जगह छिप गये

जहाँ से साम्हर की कटन है। दो आदमी और दो कुत्ते १ मील दूर मैदान की तरफ झाड़ी की आड़ में छिप गये, जहाँ को साम्हर हाँके जावेंगे। बाकी के दो आदमी और दो कुत्ते और एक मील आगे मैदान की झाड़ी में छिप गये। बाकी आदमी पहड़िया में हल्ला करके हाँका करते हैं, ताकि साम्हर पश्चिम के मैदान की तरफ भागे। ज्योंही साम्हर पहड़िया में से निकला त्योंही पहिले जो दो शिकारी दो कुत्तों को लेकर छिपे थे वे दौड़े और कुत्तों को साम्हर के पीछे छोड़ दिया। तब तो साम्हर जान लेकर बड़ी तेजी से भागेगा। जब वह एक मील ख़ूब तेज़ी से दौड़ा तब दूसरे दो शिकारी जो आगे छिपे थे वे निकल पड़े और नये कुत्तों को उन्होंने छोड़ दिया। फिर साम्हर, जिसकी चाल अब धीमी पड़ गयी थी और तेजी से दौड़ा। एक मील और जाने पर दो नये कुत्ते उसके पीछे छोड़े गये। तब तो साम्हर की दम फूल उठी और वह पास ही कहीं पानी में घुस गया। कुत्तों ने भी उसे चारों तरफ से घेर लिया लेकिन वह फिर इतने गहरे पानी में चला गया कि कुत्ते उसके पास तक बिना तैरे जा ही नहीं सकते। तब तो साम्हर ने उनको सीगों और खुरों से मारना शुरू किया। कुत्ते भी ज़ोर से भौंकने लगे। इतने में दो आदमी भाला लेकर वहाँ आ पहुँचे। उनमें से एक ने किनारे से उसपर भाला चलाया जो उसकी छाती में घुस गया। तब कुत्तों ने भी उसे जा पकड़ा। दूसरे शिकारी ने अपना भाला बन्द के नीचे मारा जो उसके कलेजे तक घुस

गया। अब साम्हर गिर पड़ा और उसे पानी के बाहर खींच लाये।

यह शिकार सबसे ज़्यादा मर्दूमी और मुश्किल का है। इसमें जंगली गोंड़ों और लभानों का ही काम है, दूसरों का नहीं। आजकल तो बेचारे ये गरीब लोग इस शिकार को कहाँ खेल पाते हैं? कभी शायद इत्तिफाक से मौका मिल गया तो मिल गया।



इसके सींग ३९ इंच के हैं।



पृष्ठ १५३



इसके सींग ३६ इंच के हैं।

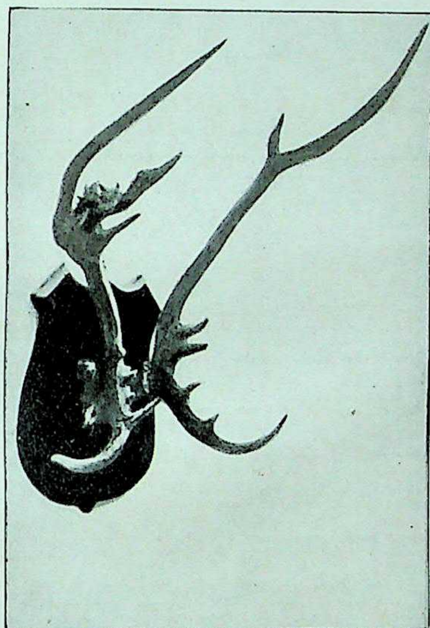
चीतल

इसके नर को ढाँक और मादा को चीतल कहते हैं। इनके माथे पर दो-दो सींग होते हैं और माथे पर की डाल में दो और होते हैं। इस तरह से चीतल के एक-एक तरफ़ तीन-तीन सींग होते हैं। इसके सींग साम्हर के सींग से ज़्यादा झुकाव लिये होते हैं। यह जानवर सब जंगली जानवरों से खूबसूरत होता है। इसका रंग मटीला, ललछौंई लिये होता है और इसके बदन पर सफेद चिट्टे होते हैं जिससे यह चीतल कहलाता है। इसकी रीढ़ पर काली पट्टी होती है जिस पर सफेद चिट्टे होते हैं। बाकी भाग में भी ऐसे ही चिट्टे होते हैं। पेटे के पास के चिट्टे करीब करीब एक लकीर के माफ़िक होते हैं और पेटे का रंग सफेद होता है। नर के सींग ज़्यादा से ज़्यादा ३६ इंच तक के पाये गये हैं, लेकिन आजकल इतने बड़े सींग का जानवर बहुत ही कम मिलता है। आजकल अगर ३५ इंच के सींगवाला जानवर भी मिल जाय तो अपने को बहुत खुश-किस्मत समझना चाहिए। चीतल के माथे पर के सींग और पेढ़ी के बीच में अकसर छोटी छोटी एक-एक, दो-दो फुन्सियाँ निकल आती हैं।

हमारे पास एक चीतल का सींग है जो बड़ा ही अजीब है। हमारी समझ में ऐसा चीतल हिन्दुस्थान में कभी नहीं

मारा गया। इसके माथे पर के सीगों में पाँच-पाँच फुन्सियाँ हैं जो दो-तीन इंच लम्बी हैं। पेढ़ी पर के दाहिने सींग में दो ही फुन्सियाँ हैं लेकिन बायें तरफ एक गज्भा है जिसमें आठ फुन्सियाँ हैं। इस तरह इस चीतल के सींग में कुल २० फुन्सियाँ हैं। सींग की लम्बाई ३३ इंच है और पेढ़ी का घेरा ३ इंच से कम न होगा। चीतल का शिकार बहुत कुछ साम्हर के माफिक होता है। फर्क सिर्फ़ इतना है कि इसका शिकार कुत्तों की मदद से बहुत कम खेला जाता है। बगाई और हँकाई में इसका शिकार बहुत उम्दा होता है।

सन् १६१३ का ज़िक्र है कि हमने ककरतला के जंगल का पर्मिट लिया। हमारे साथ दोनों मिर्ज़ा थे। वहाँ के जंगल का हाँका किया तो एक चीतल निकला जिसपर छोटे मिर्ज़ा-जी ने फ़ैर किया जो चूक गया। इसके बाद करीब ५०० चीतल दौड़ते हुए निकले जिनमें करीब करीब सब मादा थीं। हम एक नाले के किनारे बैठे थे और यह हेड़ नाले के दूसरे तरफ से दौड़ती हुई जा रही थी। हमारे हाथ में ३५५ बोर की माउज़र थी जिसे हम कन्धे में लगाकर रह गये कि कोई नर निकलेगा तो मारेंगे। इस हेड़ के करीब १०० गज़ पीछे सींग दिखलायी दिये। हम बंदूक जोड़कर रह गये। इतने ही में एक बड़ा ढाँक हमारी बंदूक की लाइन को क्रास कर गया (बंदूक की सीध को पार कर गया)। वह बड़ी तेज़ी से जा रहा था फिर भी हमने बंद जोड़कर उस पर फ़ैर किया। फ़ैर



इस सींग में २० फुन्सियाँ हैं।

पृष्ठ १५४

होते ही वह ज़रा हिचका-सा और फिर वैसी ही तेज़ी से चला गया। उसके पाँच मिनट बाद ही वहाँ से फैर होने और जानवर गिरने की आवाज़ आयी जहाँ कि बड़े मिर्ज़ाजी बैठे थे। उनकी बैठक हमसे आगे थी। इसके बाद हम नाले को पार करके वहाँ गये जहाँ हमने चीतल पर फैर किया था। वहाँ एक पत्ते पर एक बूँद खून मिला। पत्ते को हमने उठा लिया। और आगे बढ़ने पर खून की धार मिली। खून में कुछ सफेदी भी थी जिससे पता चलाता था कि गोली उसके फेफड़े में लगी है। खून की दो धारें थीं जिससे मालूम होता था कि गोली उसके बदन के उस पार फूट गयी है। हम उस खून के पीछे पीछे चले। करीब ५०० गज़ जाने पर चीतल पड़ा मिला। हमने यह फैर चीतल की दाहिनी बाजू किया था और वह बायीं करवट पड़ा था और दाहिनी तरफ राइफ़ल की गोली का एक छोटा-सा छेद था।

जब हम चीतल के पास पहुँचे तो बड़े मिर्ज़ा पास ही की झाड़ी मेंसे बोले कि यह चीतल मैंने मारा है। इतना कहकर वे हमारे पास आ गये। हमने उनसे पूछा कि तुमने चीतल के किस बाजू फैर किया था। वे बोले कि हमने उसकी बायीं बाजू गोली मारी और वह एक डग भी आगे न जाकर वहीं गिर पड़ा। चीतल को उलटाने पर उसकी बायीं बाजू बन्द पर २॥-३ इंच चौड़ा छेद था और इसके सिवाय दूसरी किसी गोली का निशान नहीं था। तब तो उन्होंने मंजूर किया कि हाँ, हमारी गोली नहीं लगी।

दरहकीकत में चीतल भागता जा रहा था और हमारी गोली उसे माकूल लगी थी लेकिन वह जोश में भागता ही गया। दूसरी गोली की आवाज़ पाकर वह थोड़ा थमका और वहीं गिरकर मर गया।

ये बड़े मिर्ज़ाजी बहुत अच्छे शिकारी हैं और दौड़ते जानवर पर बहुत अच्छी तरह से गोली मार सकते हैं। असल में भागते हुए जानवर पर गोली चलाने की तरकीब हमको इन्हींसे मालूम हुई थी जिसे आगे के बयान में लिखेंगे।

सन् १९१३ के शुरू में हम शिकार खेलने बड़े मिर्ज़ा के गाँव गधेड़ी गये और हाँका कराया गया। हाँका एक टेकड़ी का हुआ जिसके नीचे हम और बड़े मिर्ज़ा बैठे। हाँका शुरू होने के थोड़ी देर बाद एक भारी चीतल झाड़ी मेंसे निकलकर टेकड़ी के नीचे की तरफ को भागा। उसी समय हमने फ़ैर करने के लिए बन्दूक उठायी। बड़े मिर्ज़ा ने एकदम कहा कि अभी फ़ैर मत करना। पहिले जानवर को जोड़ लो और उसे आने दो। आप बन्दूक को जोड़े हुए जानवर के साथ लेते आवो, फिर जब वह बराबरी पर आ जावे तब फ़ैर करना। हमने वैसा ही किया। ज्योंही चीतल हमारी बराबरी पर आया त्योंही हमने उस पर फ़ैर किया। गोली ठीक उसके बंद पर लगी और वह तीन कुलाँटें खाकर गिर पड़ा और ज़रा भी हिला-डुला नहीं। वह ऐसे ज़ोर से नीचे की तरफ दौड़ रहा था कि गोली लगने की जगह से करीब २० गज़ दूर वह

गिरा। गोली उसके दिल मेंसे पार हो गयी थी। यही पहिला दौड़ता हुआ जानवर था जिसे हमने मारा था।

सन् १६१४ के मई महीने में हमने सिंगरामपुर के जंगल का पर्मिट लिया और अपने कुछ रिश्तेदारों को शिकार खेलने इलाहाबाद से जबलपुर बुलवाया। हम लोग ४॥ बजे सबेरे डेरे से रवाना हुए और तड़के ही जाकर एक पहाड़ी पर बैठ गये। इसका सबब यों था कि जो जानवर रात को मैदान में चरने के लिए गये होंगे वे सबेरे अपनी बैठक को जावेंगे और तब हम लोगों को दिख जावेंगे। करीब ५ बजे, जब झुलपुट थी, तब मालूम हुआ, कि दो चीतल पहाड़ी की तरफ आ रहे हैं। थोड़ी दूर तक तो वे हमारी तरफ आये लेकिन करीब ४०० गज़ दूर से ही हमारे बायें तरफ को कट गये। हम भी उसी तरफ ढूँकते हुए गये। इस तरह से एक झाड़ी की आड़ लेकर करीब १५० गज़ तक गये। इसके बाद चीतलों को कुछ शक हुआ और वे ऊपर को सिर करके सूँघने लगे।

उस वक्त उजेला काफी न हुआ था। हमारे हाथ में ३५५ बोर की माऊज़र थी। हमने बंद जोड़कर बड़े चीतल को मारा और वह वहीं गिर पड़ा। दूसरा नीचे को भागा। हम उसे जोड़ते गये। करीब ५० गज जाकर उसने खड़े होकर पीछे की तरफ देखा। हमने पीछे की मक्खी नहीं उठायी थी लेकिन आगे की मक्खी को ही ज़रा ऊँचा करके फैर किया। वह भी गिर पड़ा। पास जाकर देखा तो दोनों जानवर अच्छे

तैयार निकले। हरएक के सींग ३२ इंच के थे। हमने चीतल बहुत मारे हैं और उनका शिकार इसी तरह से होता है। इससे हम उनका ज़्यादा जिक्र करके पाठक को तंग नहीं करना चाहते।

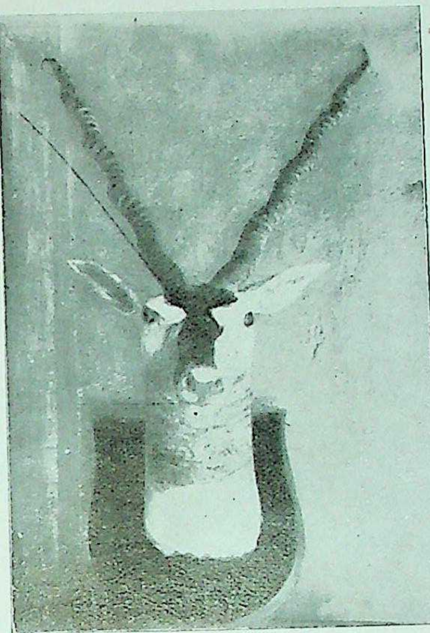




इसके सींग २३½ इंच के हैं।



पृष्ठ १५६



इसके सींग २४ इंच के हैं।

हिरन

हिरन को मृग भी कहते हैं। काला मृग बंगाली भाषा में कृष्णसार (black buck) कहलाता है और अँग्रेज़ी में जिसे एण्टीलोप (Antelope) कहते हैं उसकी जात का होता है। हिरन और एण्टीलोप में यह फ़र्क है कि हिरन के सींग ठोस रहते हैं और हर साल गिरकर नये निकलते हैं व एण्टीलोप के सींग पोंगरी के भीतर रहते हैं और वह पोंगरी निकल भी सकती है। हिन्दुस्थान में एण्टीलोप की जात में काला मृग, चिनकारा, चौसींगा और नीलगाय पाये जाते हैं।

हिरन के माफ़िक ख़ूबसूरत जानवर दूसरा बहुत ही कम होता है। मादा का रंग लाल, मटीला होता है और नर का रंग ऊपर काला हो जाता है मगर पेटा सफेद रहता है। यह जानवर झुण्ड में रहता है और उसमें एक बड़ा नर होता है। बाकी सब मादाएँ होती हैं या छोटे नर। एक झुण्ड में दो बड़े नर नहीं रहते। अगर एक झुंड में कोई दूसरा नर पहुँच जाय तो वे दोनों लड़ते हैं और उनमें से किसी एक को दूसरा हराकर भगा देता है। यह मैदान व खेतों में अकसर पाया जाता है, लेकिन दूसरी जगहों में भी मिल जाता है। इससे तेज़ भागनेवाला जानवर दुनियाँ में सिर्फ़ एक ही होता है और वह

है चीता। रियासतों में कभी-कभी हिरन का शिकार चीता छोड़कर भी किया जाता है।

शिकारियों को चौपाये के शिकार के शुरू में पहिले हिरन ही का शिकार मिलता है। इसके शिकार में एक खास बात यह होती है कि जानवर शिकारी को हमेशा दिखता रहता है और कैसा भी नवसिखा शिकारी क्यों न हो उसका हौसला शिकार को देखकर बढ़ा ही रहता है। हिरन की आदत ऐसी है कि अगर उसने किसी आदमी को अपनी तरफ आते देखा तो वह भागेगा और करीब १०० गज़ जाकर रुक जायगा और चरने लगेगा। फिर आदमी को पास आते देख ऐसा ही करेगा। कोट व हैट पहिनकर शिकार में जाने से हिरन बहुत कम मिलता है। देहाती पोशाक से वह नहीं छड़कता।

हिरन का सबसे अच्छा शिकार दो किस्म से होता है। पहिली तरह से शिकार करने में शिकारी एक बैल या टट्टू साथ में ले लेता है और उसे हिरन की तरफ को ले जाता है। आप बैल या टट्टू की आड़ लेकर जाता है। फिर भी यह याद रखना चाहिए कि सीधा कभी न चले नहीं तो हिरन भाग जायगा। हमेशा चक्कर लगाकर इसके पास पहुँचना चाहिए। अगर कोई हिरन ४०० गज़ दूर है और उस पर दो सौ गज़ से कम पर से गोली नहीं चलायी जा सकती तो शिकारी चक्कर लगावे और हर वक्त हिरन के पास होता जाय। इस तरह से

जब वह करीब डेढ़-दो सौ गज़ रह जावे तब उस पर फ़ैर करे। इस तरह से चलने में हिरन समझता है कि ये लोग गाँव के नुकसान न पहुँचा सकनेवाले आदमी हैं। इस तरह से २-३ मील का चक्कर लगाना पड़ता है। दूसरी तरह के शिकार में शिकारी दो फुट चौड़ी और तीन फुट लम्बी, घास की हरी टट्टी बना लेता है और उसीकी आड़ लेकर हिरन की तरफ जाता है और जब जानवर इतनी दूर रह जाता है कि उसके मिलने में कोई शक नहीं रहता तब गोली चलायी जाती है।

मध्यप्रदेश में अगर २३ इंच के सींगोंवाला जानवर मिले तो बहुत अच्छा समझना चाहिए। लेकिन २४ व २५ इंच तक के सींग पाये गये हैं। हमारे पास एक ऐसे हिरन का सिर है जिसके सींग २५ इंच के हैं। पहिले हिरन बहुत मिलते थे, लेकिन अब बिना औघट जगह में जाये बहुत कम मिलते हैं। इसके शिकार के लिए हल्की बन्दूक याने '३२ या '४० बोर की और '३०० या '३५५ बोर की राइफ़ल उम्दा काम देती है। इनसे २०० गज़ तक अच्छी मार की जा सकती है।

एक मर्तबा हम एक मुकद्दमे में पैरवी करने पाटन गये थे और वहाँ से शाम को तीन बजे लौट रहे थे तब पाटन से दो मील इस तरफ को मोटर मेंसे एक खेत में हिरनों का एक झुंड दिखा। उसमें सब नर थे। वह खेत गेहूँ का था और सड़क से ४०० गज़ के फासले पर था। गेहूँ कमर

है चीता। रियासतों में कभी-कभी हिरन का शिकार चीता छोड़कर भी किया जाता है।

शिकारियों को चौपाये के शिकार के शुरू में पहिले हिरन ही का शिकार मिलता है। इसके शिकार में एक खास बात यह होती है कि जानवर शिकारी को हमेशा दिखता रहता है और कैसा भी नवसिखा शिकारी क्यों न हो उसका हौसला शिकार को देखकर बढ़ा ही रहता है। हिरन की आदत ऐसी है कि अगर उसने किसी आदमी को अपनी तरफ आते देखा तो वह भागेगा और करीब १०० गज़ जाकर रुक जायगा और चरने लगेगा। फिर आदमी को पास आते देख ऐसा ही करेगा। कोट व हैट पहिनकर शिकार में जाने से हिरन बहुत कम मिलता है। देहाती पोशाक से वह नहीं छुड़कता।

हिरन का सबसे अच्छा शिकार दो किस्म से होता है। पहिली तरह से शिकार करने में शिकारी एक बैल या टट्टू साथ में ले लेता है और उसे हिरन की तरफ को ले जाता है। आप बैल या टट्टू की आड़ लेकर जाता है। फिर भी यह याद रखना चाहिए कि सीधा कभी न चले नहीं तो हिरन भाग जायगा। हमेशा चक्कर लगाकर इसके पास पहुँचना चाहिए। अगर कोई हिरन ४०० गज़ दूर है और उस पर दो सौ गज़ से कम पर से गोली नहीं चलायी जा सकती तो शिकारी चक्कर लगावे और हर वक्त हिरन के पास होता जाय। इस तरह से

जब वह करीब डेढ़-दो सौ गज़ रह जावे तब उस पर फ़ैर करे। इस तरह से चलने में हिरन समझता है कि ये लोग गाँव के नुकसान न पहुँचा सकनेवाले आदमी हैं। इस तरह से २-३ मील का चक्कर लगाना पड़ता है। दूसरी तरह के शिकार में शिकारी दो फुट चौड़ी और तीन फुट लम्बी, घास की हरी टट्टी बना लेता है और उसीकी आड़ लेकर हिरन की तरफ जाता है और जब जानवर इतनी दूर रह जाता है कि उसके मिलने में कोई शक नहीं रहता तब गोली चलायी जाती है।

मध्यप्रदेश में अगर २३ इंच के सींगोंवाला जानवर मिले तो बहुत अच्छा समझना चाहिए। लेकिन २४ व २५ इंच तक के सींग पाये गये हैं। हमारे पास एक ऐसे हिरन का सिर है जिसके सींग २५ इंच के हैं। पहिले हिरन बहुत मिलते थे, लेकिन अब बिना औघट जगह में जाये बहुत कम मिलते हैं। इसके शिकार के लिए हल्की बन्दूक याने ·३२ या ·४० बोर की और ·३०० या ·३५५ बोर की राइफ़ल उम्दा काम देती है। इनसे २०० गज़ तक अच्छी मार की जा सकती है।

एक मर्तबा हम एक मुकद्दमे में पैरवी करने पाटन गये थे और वहाँ से शाम को तीन बजे लौट रहे थे तब पाटन से दो मील इस तरफ को मोटर मेंसे एक खेत में हिरनों का एक झुंड दिखा। उसमें सब नर थे। वह खेत गेहूँ का था और सड़क से ४०० गज़ के फासले पर था। गेहूँ कमर

बराबर बढ़ा था। उसमें से हिरनों के सींग भर दिखते थे; किसी किसी का सिर भी थोड़ा सा नज़र आता था। एक झाड़ उस खेत की सड़क तरफ़ की मेंड़ पर था। उसीकी आड़ लेकर ढूँकते हुए मेंड़ तक गये। वहाँ से हिरनों का झुंड करीब २०० गज़ पड़ता था। मेंड़ पर चढ़कर देखा तो खेत बहुत बड़ा था—कम से कम ३० खंडी का। हिरनों तक पहुँचने का मौका कहीं से न था। हमारे पास '३५५ बोर की माऊज़र राइफ़ल थी। हमने मेंड़ पर बैठकर निशाना लेकर एक बड़े व काले हिरन पर फ़ैर किया। वह तो उसी जगह गिर पड़ा लेकिन बाकी के सब भागे और हमसे करीब २०० गज़ पर मेंड़ कूदकर जाने लगे। ज्योंही एक बड़ा हिरन, जिसे हम पहिले से जोड़े आ रहे थे, मेंड़ कूदने लगा, त्योंही हमने उस पर फ़ैर किया और वह वहीं गिर पड़ा। ये दोनों हिरन बड़ी आसानी से हमारे हाथ लगे लेकिन दरहकीकत में इसका शिकार ऐसी सरलता से नहीं मिलता। जब हमने शिकार खेलना शुरू किया था तब बीसों दिन ऐसे निकल जाते थे कि सारे दिन हिरन के पीछे लगे रहने पर भी एक भी न मार पाते थे। उन दिनों हिरन का बुखारसा रहता था। हर शनिवार की शाम को शहर से २०-३० मील दूर जाकर ठहर जाते थे और इतवार को दिन भर हिरनों का पीछा करते थे और फिर भी खाली हाथ ही घर लौटते थे। ऐसा सैकड़ों मर्तबा हुआ। कभी ८-१० दफे बिना शिकार के आये तो एकाध बार शिकार लेकर लौटते थे। जब हमें ऊपर लिखी

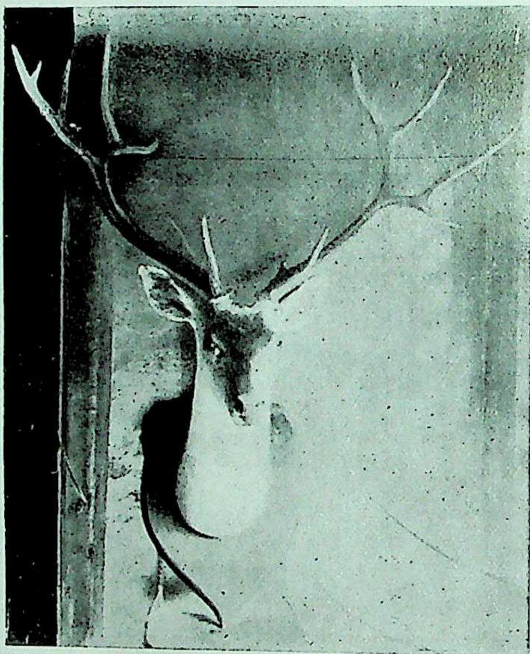
हुई तरकीबें मालूम हो गयीं तब शिकार करना आसान हो गया।

एक बार हम पाटन सड़क पर जबलपुर से ६ मील दूर उजरौंड़ गाँव को गये। सड़क छोड़कर एक मील भीतर जाने पर हिरनों का एक झुण्ड दिखा जिसमें एक ही बड़ा नर था। उसने हम लोगों को देख लिया और वह खड़ा पड़ता था, याने उसका सिर हमारी तरफ था। वह हमसे करीब २०० गज़ दूर था। हमने उसके सीने को जोड़कर फैर किया मगर बन्दूक कुछ नीची हो जाने से गोली उसकी अगली टाँगों के बीच से निकलकर पिछली टाँग में लगी। वह गिर पड़ा और फिर उठकर भागा। उस समय सबेरे के आठ बजे थे। हमने उसका पीछा किया और दिन भर इसीमें बिता दिया। वह दिखता तो ज़रूर रहा मगर मार पर नहीं आता था; अकसर तीन-चार सौ गज़ के फासले से भाग जाता था।

इसका पीछा करते करते हम मीरगंज स्टेशन के पास के तालाब तक पहुँचे थे। वह इस ख़्याल से किया था कि हिरन शायद पानी पर पहुँचे और चूँकि बड़े भारी इलाके में यही एक तालाब था इससे मुमकिन था कि थका हुआ जानवर वहाँ जाता। एक हिरन हमको तालाब के पास चरता हुआ दिखायी भी दिया था, लेकिन उसकी पार पर पहुँचने पर नहीं दिखा। उसे भागते हुए भी किसी ने नहीं देखा।

हमारे साथ फैजुल्लाखाँ भी थे। उन्होंने कहा कि हिरन उस गेहूँ के खेत में लेटा है। यह हिरन बड़ा चालाक जानवर था और लेटे-लेटे ही भागता था। हम तो उसे ढूँढ़ने खेत के एक तरफ को गये और वह दूसरे तरफ से निकल भागा। उस वक्त हमने देखा कि वह तीन ही टाँगों से भाग रहा है। उसकी एक टाँग जिसमें गोली लगी थी टूटकर गिर गयी थी। उस समय मैं और मेरे ख़्याल से हिरन भी थक गया था और शाम के चार बज गये थे।

उस खेत के पास ही उसके मालिक की झोपड़ी थी जिसमें एक छोटा-सा कुत्ता था। हिरन को देखकर कुत्ता उसकी तरफ दौड़ा और उसने हिरन की टूटी टाँग पकड़ ली। हिरन ने उसे सींग मारना चाहा और इतने ही में वह गिर पड़ा। दोनों लोट-पोट हो गये। हम दौड़कर पास पहुँच गये और एक ही गोली से उसका काम तमाम कर डाला। इस समय करीब शाम हो गयी थी और ठंड के दिन थे। रात भी अँधेरी थी। खेतों वगैरह को पार करते हुए ८॥ बजे रात को सड़क पर पहुँचे। हम ताँगे में शिकार को गये थे और उसमें बैठकर १० बजे रात को घर पहुँचे।



इसके सींग ३६ इंच लम्बे हैं
और इनका विस्तार ४५ इंच हैं।
पृष्ठ १६५

बारहसिंगा और बोदा

मई सन् १६३० में हम कुछ ज़रूरी काम से पचमढ़ी से जबलपुर आये थे। काम खतम हो जाने पर तीन दिन का वक्त हाथ में रहा। हमने सोचा कि काना-किसली के जंगल में शिकार खेलते हुए पचमढ़ी जाना चाहिए। हमारे साथ सिन्हा साहब, अब्दुल्ला शिकारी और मुंशी मुहीयुद्दीन भी गये थे।

जबलपुर से तीन बजे दिन को मोटर पर सवार होकर उस जंगल को रवाना हुए और शाम होते होते बह्मनी बंजर पहुँच गये। रात वहाँ के डाक-बंगले में काटी। बह्मनी बंजर मण्डला से ७ मील आगे है और यहीं से सरकारी जंगल शुरू होता है जिसका नाम इस जगह पर से "बंजर ब्लाक" पड़ा है। दूसरे दिन बड़े सुबह चा वगैरह पीकर वहाँ से चल दिये और बंजर नदी को पारकर कच्ची सड़क से ३२ मील जाने पर काना पहुँचे। वहाँ तक जंगल घना नहीं मिला लेकिन उसके बाद जंगल बहुत घना है। काना में रेंज आफीसर से मुलाकात हुई और उन्होंने कहा कि किसली में अच्छा फॉरेस्ट-हाउस है। इस सबब हमने किसली जाना ही मुनासिब समझा। मोटर को बड़े घने जंगल और नाले-भरकों वगैरह मेंसे लेजाना पड़ा। १२ बजे दोपहर को किसली पहुँच गये। यह गोड़ों की एक छोटीसी बस्ती है।

किसली का फॉरेस्ट-हाउस बहुत बड़ा और निहायत उम्दा बना है। वह एक ऊँचे टीले पर है और पास ही एक फर्लांग पर नदी है जिसकी तरफ ज़मीन ढालू है। बड़ा भारी साल का जंगल बँगले के पीछे की तरफ, याने दक्षिण-पश्चिम में है। बँगला जंगल के ईशान्य कोण में है। उसका रसोईघर करीब १०० गज़ पीछे है और रात को वहाँ इतना अँधेरा हो जाता है कि रसोइया वहाँ से बँगले तक भोजन लाने में दहशत खाता था। जब तक उसके साथ एक आदमी लालटेन लिये न होता वह हर्गिज़ न आता था। सुनसान भी काफ़ी रहता है। मेरी समझ में उस जंगल में १०० फुट से कम का ऊंचा साल का दरख़्त कोई न होगा।

हालाँकि यह मई का महीना था, लेकिन यहाँ घनी छाया और अच्छी ठंड थी। पास ही नदी में हम लोगों ने ख़ूब नहाया। इस बीच में रसोइये ने भोजन तैयार कर दिया। खा-पीकर हम लोग लेट रहे और दो घंटे आराम करने के बाद तीन बजे उठे। हाथ-मुँह धोकर चा पी और कपड़े पहिनकर निकल पड़े। मुहीयुद्दीन के साथ एक तरफ सिन्हा साहब और हम अब्दुल्ला को लेकर दूसरे तरफ गये। हमारे साथ वहाँ का एक गोंड़ भी था।

यह जंगल सैंक्चुअरी है याने यह ख़ास लाट साहब के लिए रखाया जाता है और बिना उनकी इज़ाज़त के कोई वहाँ शिकार नहीं खेल सकता। दरहकीक़त में ये जंगल उन लोगों

का शिकारगाह है जो लाट साहब के विलायत के बड़े मुलाकाती होते हैं और हिन्दुस्थान में शिकार खेलने आते हैं।

हमको शिकार खेलते ३५ साल हो गये और मध्यप्रदेश के करीब करीब हरएक जंगल में हमने शिकार खेला, लेकिन बंजर ब्लाक के माफिक रमणीय जंगल और उत्तम शिकार कहीं नहीं देखा। हमारे साथ का गोंड़ हमको करीब एक मील ले गया और वहाँ उसने हम लोगों को एक ऊँची टेकड़ी पर खड़ा कर दिया। वहाँ से उत्तर की तरफ नज़र फेंकी तो कम से कम १००० बारहसिंगे दिखायी पड़े। वे करीब आधा मील की दूरी पर थे। हमने उस आदमी को वहीं बिठला दिया और हम अब्दुल्ला को साथ लेकर ढूँकते हुए करीब पाव मील गये। वहाँ जाकर हम एक झाड़ी की आड़ में खड़े हो गये और दूरबीन लगाकर देखा तो उस झुंड में एक भी नर नहीं दिखा। जानवर करीब करीब हमारे चारों तरफ थे। उस झाड़ी की आड़ लेकर ढूँकते हुए हम २०० गज़ और गये। अब बारहसिंगों का झुंड कुल २०० गज़ दूर रह गया। वहाँ से हम हरएक जानवर को अच्छी तरह मार सकते थे। फिर बारीकी से देखा लेकिन फिर भी कोई नर न दिखा। उस झुंड में या तो सब मादी थीं अथवा बिना सींगवाले नर थे क्योंकि वे गर्मी में सींग गिरा देते हैं। शाम हो जाने से फिर हम लोग फॉरेस्ट-हाउस वापस आ गये।

बारहसिंगे की मादी छोटी होती है और उसका रंग लाल होता है। उसकी रीढ़ काली होती है जिसपर सफेद

चिट्टे होते हैं और उसके दोनों तरफ भी कतार में एक एक सफेद चिट्टा होता है। नर के सींग जो माथे पर होते हैं वे साम्हर के सींगों के माफिक खड़े नहीं होते बल्कि ज़मीन के समानान्तर (Parallel) होते हैं और ऊपर के सींग ज्यादा झुकाव लिये हुए किसी तरह से चीतल के सींगों के सरीखे होते हैं। अच्छे बारहसिंगे के सींगों में बारह या इससे ज़्यादा शाखाएँ होती हैं। ज़्यादातर बारह शाखाएँ ही होती हैं और इसीलिए वह बारहसिंगा कहलाता है।

ज्योंही हम बँगले पर आकर बैठे त्योंही हमने चा बनाने के लिए रसोइया को आर्डर दिया। थोड़ी ही देर में झुलपुट-सी हो चली और चा भी तैयार होकर आ गयी। इतने में सिन्हा साहब भी आ गये। वे अपने साथ एक भारी चीतल मारकर लाये थे जिसके सींग ३६ इंच के थे और बहुत ही खूबसूरती से झुकाव लिये हुए थे। यह बहुत पुराना था यहाँ तक कि इसके दाँत भी घिस गये थे। बड़ी खुशी हुई कि पहिले दिन ही शिकार मिल गया।

उस दिन खाना खाकर रात को हम तो लेट गये लेकिन सिन्हा साहब नदी के किनारे एक पेड़ पर जा बैठे क्योंकि वहाँ पर गुलबाघ के पैर के निशान थे। उनको मचान पर बैठे थोड़ी ही देर हुई थी कि पाँच-छह जंगली कुत्ते आ गये। सिन्हा साहब ने उनको मारा नहीं बल्कि भगा दिया। वे बारह बजे रात तक बैठे रहे, लेकिन ज़्यादा ठंड लगने के सबब उतरकर चले आये।

इस जंगल में हाँके से शिकार खेलना कतई मना है। यहाँ शिकार सिर्फ ढुकाई से होता है इसलिए चलने में ज़्यादा परिश्रम पड़ता है। दूसरे दिन सबेरे पाँच बजे ही निकल पड़े और बारह बजे तक घूमे। जानवर बहुत मिले लेकिन अच्छे सींगवाले नहीं मिले। चीतल ज़रूर मिले थे लेकिन कहा कि पहिले बारहसिंगा मार लें फिर चीतल देखेंगे। जब बगाई में निकले थे तब एक बोदा मिला था मगर वह पट्ठा था इससे उस पर फ़ैर नहीं किया। शाम को तीन बजे से फिर निकले और घूमते हुए बाँस के तोड़ने की आवाज़ सुनाई दी। हम लोगों ने एक पेड़ की आड़ में खड़े होकर देखा तो एक बोदा दिखायी पड़ा। करीब दो सौ गज़ तक तो हम लोग ढूँककर गये और फिर वहाँ से उसे फ़ैर मारा। गोली उसे लगी तो सही मगर वह भाग गया। शाम हो जाने से उसे नहीं ढूँढ़ा और बँगले पर वापस लौट आये।

तीसरे दिन बड़े सबेरे उसी जंगल को चले जहाँ बोदे पर गोली चलायी थी। करीब एक मील चलने पर बारहसिंगों का एक झुण्ड मिला जिसमें सींगोंवाले तीन नर दिखे। हमने एक के ऊपर फ़ैर किया। वह घुटनयाया मगर फिर खड़ा होकर भाग गया और हम फ़ैर नहीं कर सके। तब हम पास ही एक टेकड़ी पर चले गये, जहाँ से आधा मील दूर नीचे की तरफ बारहसिंगों का एक झुण्ड चर रहा था। जब बारहसिंगा चारागाह में घास चरता है, तब उसका रंग घास के रंग में मिल

जाता है। दूरबीन से देखने पर उनमें सिर्फ एक नर दिखायी दिया। उस पहाड़ी से नीचे की तरफ आदमी की ऊँचाई बराबर ऊँचा घास था। उसमें से करीब पाव मील नीचे की तरफ आने पर साथ के एक गोंड़ को एक पेड़ पर चढ़ा दिया। उसने बतलाया कि नर किस तरफ को है और कहाँ से जाने पर वह मिल सकता है ? उसने एक पेड़ बताया और कहा कि उसके नीचे जाने पर वह नर दिखेगा। हम ढूँकते हुए वहाँ गये और वहाँ से एक नर और दो मादा दिखायी दीं। नर दो सौ गज़ से कुछ ऊपर पर था मगर खड़ा (head on) पड़ता था। हमने उसकी छाती जोड़कर ४०० बोर की राइफ़ल से फैर किया। जानवर एक अच्छे घोड़े के बराबर था। गोली लगते पर वह पिछले दोनों पैरों पर खड़ा हो गया और वैसे ही करीब २० फुट चला गया और फिर गिर पड़ा। हम और वह गोंड़ दौड़कर उसके पास पहुँचे। हम उसकी बगल में बैठ गये और वह गोंड़ उसकी पीठ से टिक गया। गोंड़ वहाँ बैठकर चिलम में तमाखू भरने लगा। ज्योंही उसने एक फूँक पी त्योंही बारहसिंगा, जो उठने की कोशिश कर रहा था, एकदम उठकर भागा। हम उसकी तरफ पीठ करके बैठे थे। गोंड़ चिल्लाया कि यह भगा जाता है, भगा जाता है। बन्दूक उठाकर जब तक हमने कन्धे पर लगायी तब तक वह सौ गज़ चला गया था। वहाँ उसने पीछे फिरकर देखा। उसी दम हमने उसकी गर्दन जोड़कर फैर किया और वह गिर पड़ा। उसके पास जाकर गोंड़ को वहाँ बिठाया और कहा कि हम आदमी



इसके सींग २० इंच मोटे हैं ।

पृष्ठ १७१

इसे उठाने को भेजते हैं, तुम यहीं बैठो नहीं तो फिर नहीं मिलेगा, क्योंकि चारों तरफ बड़ा घास है। इसके सींग ३६ इंच लम्बे और विस्तार में चार फुट चौड़े हैं। इसीकी तस्वीर इस अध्याय के शुरू में लगी है।

वहाँ से फिर उस जगह को चले जहाँ बोदे पर फैर किया था। करीब एक मील जाने पर बारहसिंगों का दूसरा झुंड मिला। यह झुंड बड़ा था मगर इसमें दो ही नर थे। उनमें के बड़े नर को ढूँढ़कर उस पर फैर किया। पहिली गोली चूक गयी और वह वहाँ से भागकर ५० गज़ पर खड़ा हो गया। हमारे हाथ में चार सौ बोर की राइफ़ल थी। ज्योंही वह खड़ा हुआ त्योंही दूसरी नाल दाग दी। हालाँकि वह अब २५० गज़ पर था, लेकिन गोली ठीक उसके बन्द पर लगी और वह वहीं गिर पड़ा। एक आदमी उसके पास भी छोड़ दिया और सिर्फ शिकारी को साथ लेकर आगे बढ़े। अब हम वहाँ पहुँचे जहाँ बोदे पर फैर किया था। करीब ३ मील आगे तक खून मिला और आखीर में बोदा मरा मिला। उसका चमड़ा लड़ैयों ने रात को खराब कर दिया था। उसका सिर काट लिया और बँगले पर आकर आदमी भेजकर मँगवा लिया। इसके सींग बहुत मोटे हैं—जड़ पर करीब २० इंच। जानवर बहुत बड़ा और जवान था। इसके सींग निहायत ख़ूबसूरत हैं।

इसके दूसरे दिन हम वापस हो गये। सिन्हा साहब, अब्दुल्ला शिकारी और मुंशी मुहीयुद्दीन को वहीं छोड़ आये।

जब हम वापस हुए तब हमारे परमिट में दो बोदे, तीन बारहसिंगे और तीन चीतल थे। हमारे चले आने के दूसरे दिन शाम को सिन्हा साहब ने एक अच्छा बारहसिंगा मारा। उसका सिर काट लिया और जगह अच्छी तरह पहचानकर बँगले को लौट आये। वहाँ से ६ आदमियों को बारहसिंगा उठाने को भेज दिया। चूँकि यह जगह बँगले से करीब दो मील थी, गोंड़ लोग करीब ८ बजे रात को वहाँ पहुँचे। उस वक्त बारहसिंगे पर शेर बैठा था। वे ऐसे बेवकूफ़ निकले कि उन्होंने लौटकर ख़बर तो दी नहीं, बल्कि शेर को भगा दिया और बारहसिंगे को ले आये।

अगले दिन शेर के लिए मचान वगैरह बनाकर सिन्हा साहब वहाँ बैठे मगर शेर आया ही नहीं। तीसरे दिन दिन भर ढूँकने के बाद ५ बजे शाम को एक अच्छा बोदा उनको दिखायी पड़ा। उनके हाथ में उस वक्त '३५५ बोर की पाँच नलीवाली माऊज़र राइफल थी। उन्होंने करीब १५० गज़ पर से उसकी गर्दन जोड़कर ठोस गोली मारी। गोली लगते ही वह गिर पड़ा लेकिन फिर उठकर भागा। दूसरी गोली बंद जोड़कर मारी। वह भी उसे लगी मगर वह भागता ही गया। सिन्हा साहब और अब्दुल्ला ने उसका पीछा किया। करीब एक मील जाने पर उसे खड़ा पाया। वह फिर भागा और उन्होंने उस पर दो फैर फिर किये। वे भी लगे मगर वह भागता ही गया। इन्होंने फिर पीछा किया। शाम होते होते

वह फिर मिला और इनको देखकर भागा। इन्होंने फिर दो फैर मारे लेकिन वह चला ही गया। अँधेरा हो जाने से ये लोग वापस आ गये।

इन्होंने जो ६ फैर किये थे उसमें से २ ठोस गोली के और चार फूट की गोली के थे। सवेरे दो आदमियों को साथ ले ये वहाँ तक गये जहाँ आखिरी फैर किये थे। वहाँ चारों जन फैल गये और उसे ढूँढ़ने लगे। आधा मील पर उसे मरा पाया। इन्होंने जितने फैर मारे थे सब भैंसे की दाहिनी तरफ मारे थे और वह दाहिनी करवट पड़ा था। ऊपर की तरफ एक भी गोली का निशान नहीं था। चारों ने बड़ी मिहनत से करीब आधा-घंटे में टानों की सहायता से उसे उलटाया। और तब देखा कि उसे छहों गोलियाँ लगी थीं। पहिली गोली गर्दन की हड्डी से रगड़ खाती हुई निकल गयी थी मगर हड्डी नहीं टूटी थी। दूसरी गोली बंद के नीचे लगी थी और उसका दिल बच गया था, मगर एक फेफड़ा फूट गया था। बाकी की चारों गोलियाँ चमड़े में ही घुसकर फूट गयी थीं। वे उसका सिर काट लाये। चमड़ा इसका भी खराब हो गया था। इसके दूसरे दिन वे वहाँ से चले आये। उस दिन सिन्हा साहब ने एक भारी चीतल करीब २५० गज़ से मारा था जिसके सींग ३६ इंच के निकले। इसका सिर हमारे पास है।

सन् १६२५ के मई महीने में हमने सिवनी जिले के सकाटा ब्लाक का पर्मिट लिया। हम जबलपुर से सिवनी और वहाँ से सरेखा मोटर मोटर से गये। सरेखा में मोटर छोड़

जब हम वापस हुए तब हमारे परमिट में दो बोदे, तीन बारहसिंगे और तीन चीतल थे। हमारे चले आने के दूसरे दिन शाम को सिन्हा साहब ने एक अच्छा बारहसिंगा मारा। उसका सिर काट लिया और जगह अच्छी तरह पहचानकर बँगले को लौट आये। वहाँ से ६ आदमियों को बारहसिंगा उठाने को भेज दिया। चूँकि यह जगह बँगले से करीब दो मील थी, गोंड़ लोग करीब ८ बजे रात को वहाँ पहुँचे। उस वक्त बारहसिंगे पर शेर बैठा था। वे ऐसे बेवक़ूफ़ निकले कि उन्होंने लौटकर ख़बर तो दी नहीं, बल्कि शेर को भगा दिया और बारहसिंगे को ले आये।

अगले दिन शेर के लिए मचान वगैरह बनाकर सिन्हा साहब वहाँ बैठे मगर शेर आया ही नहीं। तीसरे दिन दिन भर ढूँकने के बाद ५ बजे शाम को एक अच्छा बोदा उनको दिखायी पड़ा। उनके हाथ में उस वक्त '३५५ बोर की पाँच नलीवाली माऊज़र राइफल थी। उन्होंने करीब १५० गज़ पर से उसकी गर्दन जोड़कर ठोस गोली मारी। गोली लगते ही वह गिर पड़ा लेकिन फिर उठकर भागा। दूसरी गोली बंद जोड़कर मारी। वह भी उसे लगी मगर वह भागता ही गया। सिन्हा साहब और अब्दुल्ला ने उसका पीछा किया। करीब एक मील जाने पर उसे खड़ा पाया। वह फिर भागा और उन्होंने उस पर दो फैर फिर किये। वे भी लगे मगर वह भागता ही गया। इन्होंने फिर पीछा किया। शाम होते होते

वह फिर मिला और इनको देखकर भागा। इन्होंने फिर दो फैर मारे लेकिन वह चला ही गया। अँधेरा हो जाने से ये लोग वापस आ गये।

इन्होंने जो ६ फैर किये थे उसमें से २ ठोस गोली के और चार फूट की गोली के थे। सबेरे दो आदमियों को साथ ले ये वहाँ तक गये जहाँ आखिरी फैर किये थे। वहाँ चारों जन फैल गये और उसे ढूँढ़ने लगे। आधा मील पर उसे मरा पाया। इन्होंने जितने फैर मारे थे सब भैंसे की दाहिनी तरफ मारे थे और वह दाहिनी करवट पड़ा था। ऊपर की तरफ एक भी गोली का निशान नहीं था। चारों ने बड़ी मिहनत से करीब आधा-घंटे में टानों की सहायता से उसे उलटाया। और तब देखा कि उसे छहों गोलियाँ लगी थीं। पहिली गोली गर्दन की हड्डी से रगड़ खाती हुई निकल गयी थी मगर हड्डी नहीं टूटी थी। दूसरी गोली बंद के नीचे लगी थी और उसका दिल बच गया था, मगर एक फेफड़ा फूट गया था। बाकी की चारों गोलियाँ चमड़े में ही घुसकर फूट गयी थीं। वे उसका सिर काट लाये। चमड़ा इसका भी खराब हो गया था। इसके दूसरे दिन वे वहाँ से चले आये। उस दिन सिन्हा साहब ने एक भारी चीतल करीब २५० गज़ से मारा था जिसके सींग ३६ इंच के निकले। इसका सिर हमारे पास है।

सन् १९२५ के मई महीने में हमने सिवनी जिले के सकाटा ब्लाक का पर्मिट लिया। हम जबलपुर से सिवनी और वहाँ से सरेखा मोटर मोटर से गये। सरेखा में मोटर छोड़

दी और वहाँ से दस मील दूर सकाटा में जाकर डेरा डाला। गर्मी बहुत तेज़ पड़ी थी और पानी चारों तरफ सूख गया था। हमारे डेरे से ५-६ मील दूर नालों में पानी के गड्ढे थे जिनमें से कोई भी गड्ढा ३-४ फुट से ज्यादा बड़ा न था। ऐसे तीन या चार गड्ढे थे और हरएक गड्ढा दूसरे से ५-६ मील दूर था।

फारेस्ट डिवीजनल आफीसर ने मेहरबानी करके वहाँ के फारेस्टर को हमारे जिम्मे कर दिया था। वह बहुत होशियार आदमी था। वह हमको एक गड्ढे के पास ले गया जो डेरे से ६ मील दूर था। वहाँ जाने पर देखा कि गड्ढे का पानी बिलकुल सूख गया है। वहाँ से वह दूसरे गड्ढे को ले गया। पहिले से दूसरे गड्ढे को जाने में बड़ा घना जंगल पड़ता है और पहाड़ियों, सूखे नालों मेंसे जाना पड़ता है। इन गड्ढों के बीच में कोई रास्ता नहीं है। काँटों और झाड़ियों के बीच से हम लोग वहाँ गये और उस गड्ढे को भी करीब करीब सूखा पाया—कुल तीन-चार लोटे पानी था। एक बात इसमें अच्छी थी, कि यह रेत में था। चारों तरफ से खोदकर हमने उसे थोड़ा बड़ा कर दिया और डेरे पर वापस चले आये। उस रास्ते में बहुतसे साम्हर-चीतल मिले मगर फैर किसी पर नहीं किया। जब डेरा करीब एक मील रह गया तब एक बड़ा भिटसाम्हर मिला। सिन्हा साहब ने उस पर फैर किया और वह गिर पड़ा। उसे झट से जाकर उठा लिया। बड़े ताज्जुब की बात हुई कि गिरते ही उसके दोनों सींग सिर

से अलग हो गये। सींग बहुत उम्दा व ६-७ इंच के थे। ऐसा मालूम पड़ता है कि उसके सींग झरने वाले ही थे और ज़ोर से गिरने से वे अलग जा गिरे।

भिटसम्हरा के माथे में हड्डी की करीव ३ इंच ऊँची कुरसी रहती है और उसके ऊपर से सींग निकलते हैं जिनमें हरएक तरफ दो कनखे होते हैं, एक तो करीव एक इंच का और दूसरा ६-७ इंच का। उसके ऊपर के जबड़े में २-३ इंच लम्बी दो खीसें होती हैं जिनसे वह जमीन मेंसे काँदा वगैरह खोदकर खाता है।

उस दिन हम लोगों ने करीव वीस मील का चक्कर लगाया। इसी तरह करीव सात दिन तक रोज १५-२० मील का चक्कर लगाते रहे मगर कुछ भी शिकार हाथ नहीं लगा। वोदों के एक झुंड के निशान तो रोज मिलते थे लेकिन वोदे दिखलायी नहीं पड़े। सिर्फ छठवें रोज़ एक गुलवाघ मारा था, जिसका बयान पहिले लिखा जा चुका है। सातवें दिन शाम को एकाएक वादल घिर आये और बड़े जोर से पानी गिरा—करीव दो इंच। यह दिन ३० मई का था।

आठवें दिन बड़े सुवह बुद्धू गोंड़ को बुला लिया। यह आदमी सकाटा का शिकारी था और जानवरों के खोज पर से उनका पता लगाने में बड़ा होशियार था। वह हम लोगों को कत्थकभट्टी नाम के जंगल में ले गया, जो हमारे डेरे से ५ मील था। वहाँ कुछ थोड़ी सी जगह में एक प्रकार

का घास लगा था, जिसे बोदे बड़े चाव से खाते हैं। वहाँ जाकर बुद्धू ने बताया कि कल रात को यहाँ बोदे चरते रहे हैं। जहाँ हम लोग बिना निशान के नहीं जान सकते वहाँ उसने बताया कि यहाँ बोदे ने घास चरी है। घास के बीच में एक जगह बोदे ने घास में मुँह मारा था जिससे ऊपर का घास कट गया था। वहाँ उसके पैर के निशान भी मिले। एक ज़गह मकड़ी का एक बड़ासा जाला भी टूट गया था जिस पर से बुद्धू ने कहा कि यह जाला बहुत करके बोदे ने ही तोड़ा है और पैर के निशान को देखकर कहा कि जानवर बड़ा भारी नर है और अकेला है।

चूँकि रात को पानी गिर चुका था बोदे के पैर के निशान बराबर मिलते गये। हम लोग खोज देखते हुए करीब पाँच मील तक गये। बोदा जंगल मेंसे गया था और पाँच पहाड़ियाँ चढ़ा-उतरा था। हम लोग भी चढ़ते उतरते थक गये। एक जगह जाकर हम लोग बैठ गये। उसके साम्हने एक ऊँची पहाड़ी थी। वहाँ बुद्धू बोला कि आप लोग यहाँ चुपचाप बैठो और मैं पहाड़ी पर चढ़कर देखे आता हूँ। उस दिन हमारे साथ फारेस्टर न था। उसके बदले में सिर्फ दो गोंड़ और थे। बुद्धू कुछ दूर तक तो चलकर गया और फिर जानवरों के समान हाथ-पैरों पर चलकर पहाड़ी के ऊपर तक चुपके-चुपके गया। गरमी के दिन थे इसलिए बुद्धू हमको साफ दिखता था। चोटी

पर पहुँचने पर बुद्धू ने उस पार देखा और फिर वैसे ही वह हमारे पास वापस आया और कहने लगा कि बोदा खड़ा है। हमने अपनी एक्सप्लोरा में दो कारतूस भर लिये और बैठे-बैठे ही एक बाँसभेड़े की आड़ लेकर ऊपर चढ़े। पहाड़ी पर चढ़ने में करीब आधा घंटा लगा। ऊपर सिर उठाकर हमने देखा कि बोदा ५० गज़ पर छाया में आँखें मींचकर खड़ा है। सिर्फ उसके कान भर हिलते थे, नहीं तो घनी छाया में पहिचान नहीं पड़ता था। हमने एक्सप्लोरा उठाकर दोनों आँखों के बीच निशाना लेकर फैर किया। गोली चलते ही 'थड' से आवाज़ हुई जिससे हम समझे कि बोदे को गोली लग गयी। उसी समय बोदा घूम गया और सिर हिलाता हुआ जंगल में घुस गया। दूसरा फैर नहीं मार सके।

जहाँ वह खड़ा था वहाँ जाकर देखा तो खून मिला। बुद्धू बोला कि गोली उसे लग गयी है और उसे ढूँढ़ना होगा। यह करीब १२ बजे दिन का ज़िक्र है। ख़ैर, खून का पता लगाते हुए आगे बढ़े और करीब २ बजे एक घने जंगल में पहुँचे। वहाँ उसके खुर के निशान मिले और खून भी मिला। उसी समय उसके भागने की आहट भी मिली, मगर बोदा दिखा नहीं।

हम लोग बड़े सुबह पाँच बजे चा पीकर चले थे। खाना कुछ भी साथ नहीं था। साथ में जो पानी ले गये थे

वह भी खतम हो गया था। अब हम लोगों को प्यास और भूख दोनों ज़ोर से लगीं। उस जंगल में तेंदू के बड़े-बड़े दरख़्त थे, जिनके फल गिरकर सूख गये थे। उनको बीनकर छीला और सूखे गूदे को खाया। हम मेंसे हरएक ने ८-१० तेंदूँ इस तरह से खाये और फिर बोदे की खोज लेते हुए आगे बढ़े। ६ बजे शाम तक खोज बराबर करते गये मगर बोदा नहीं मिला। अब हम लोग बहुत थक गये थे। हमने अपनी बड़ी बन्दूक बुद्धू गोंड़ को दे दी और उसमें के कारतूस निकालकर खीसे में रख लिये। अब केम्प सिर्फ ४ मील दूर रह गया था (क्योंकि बोदा घूमकर केम्प ही की तरफ चला गया था)। कहा कि अब अगर बोदे का पीछा और करते हैं तो फिर अँधेरा हो जाने से केम्प नहीं पहुँच सकेंगे। करीब १०० कदम चलने पर बोदा दिखा। बुद्धू हमसे करीब दस गज़ आगे था। उसने चिल्लाकर कहा कि साहब बोदा वह खड़ा है। तुरन्त ही हमारी नज़र उसपर पड़ी। हमने बुद्धू से बन्दूक माँगी और उसकी तरफ दौड़े। बन्दूक लेकर हमने उसमें गोली भरी और उसे कन्धे पर चढ़ाया। जिस वक्त हमने बोदे को देखा उसी वक्त उसने भी हमको देखा। उसने हम पर हमला तो नहीं किया बल्कि उल्टा भागा। जब तक हम बन्दूक कन्धे पर ला पाये तब तक वह हमसे २५० गज़ दूर जा पहुँचा और एक टेकड़ी पर जाकर दूसरे पार जानेवाला ही था। हमने सोचा कि अब यह ज़रासी भी देरी करने से नहीं मिलेगा। हमको पीछे की मक्खी



पृष्ठ १७६

उठाने का वक्त ही नहीं था इससे आगे की मक्खी को ही ज़रासा ऊँचा करके फ़ैर कर दिया। गोली ठीक उसकी दुम के नीचे लगी और वदन को फोड़ती हुई छाती मेंसे बाहर निकल गयी। वह एकदम सिर के बल कुलाँट खाकर गिर पड़ा। उसका सिर उसी वक्त काट लिया और चमड़ा दूसरे दिन छीला।

बोदा बहुत बड़ा था। उसके भारीपन का अन्दाज़ इससे लगाया जा सकता है कि जब वह करवट पर पड़ा था तब हम उसकी साम्हने की ऊपर की तरफ की टाँग के सिरे पर खड़े हो गये और फिर भी वह नहीं झुकी। बुद्धू गोंड़ बोला कि अगर आप इज़ाज़त दें तो मैं इसकी कलेजी निकाल लूँ। हमने कहा कि हमें कोई एतराज़ नहीं है। उसने बोदे का पेट चीरकर सारी अँतड़ियाँ निकाल दीं और फिर हँसिया लेकर उसके पेट में घुसकर करीब १५ सेर कलेजी काट लाया। उस वक्त जब वह बोदे के पेट में घुसा उसका बदन बिलकुल न दिखता था—पूरा का पूरा बोदे के भीतर था। उस दिन शाम को ८ बजे डेरे पर पहुँचे। दूसरे दिन चमड़ा छिलवाकर चले आये। पहिली गोली उसकी आँखों के बीच में न लगकर दाहिनी आँख के करीब दो इंच नीचे लगी थी। जब उसे गोली लगी थी तब बोदा सिर ऊँचा किये था और इस सबब से गोली सिर में न घुसकर माथे की हड्डी को फोड़कर बाहर निकल गयी थी।
